चन्द्रावतार सिद्ध चौरंगीनाथ

(पूरण भगत)

लेखिका

शिवानी शर्मा

प्रकाशक : मठ अस्थल बोहर, रोहतक

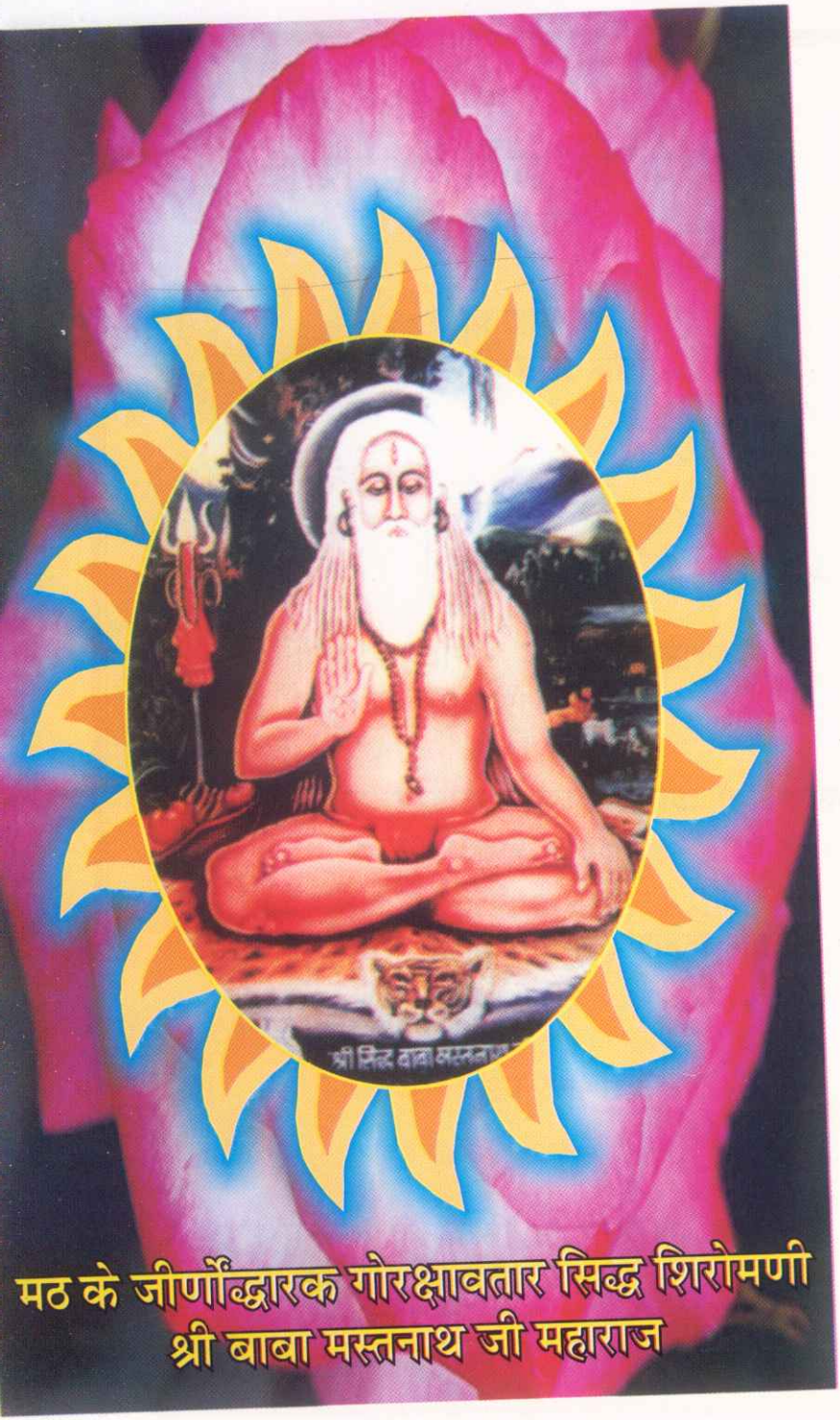

मठ के जीर्णोद्धारक गोरक्षावतार सिद्ध शिरोमणी
श्री बाबा मस्तनाथ जी महाराज

चन्द्रावतार सिद्ध चौरंगीनाथ
(पूरण भगत)

प्रकाशक
महन्त चाँदनाथ योगी

लेखिका
शिवानी शर्मा

विशेष सहयोग– योगी हजारीनाथ
(पुजारी जी)

मठाधीश्वर मठ अस्थल बोहर, रोहतक (हरियाणा)
सर्वाधिकार सुरक्षित

15 मार्च सन् 2008 (फागुन) शुक्ल नवमी

प्रथम संस्करण–500

इस पुस्तक के किसी भी भाग या अंश की
नकल करना गैर कानूनी होगा।

महन्त श्री चाँदनाथ योगी

गद्दी नशीन महन्त गद्दी मठ
अस्थल बोहर, रोहतक (हरियाणा)

श्री गुरू चरणों में समर्पित

आशीर्वचन

प्रिय भक्त,

शिवानी शर्मा,

ब्रह्म चिन्तन में चित्त रमा हुआ है जिन्हें संसार में अपने लिए किचिंन्मात्र भी अपेक्षा नहीं, सम्पूर्ण विश्व के जीव मात्र उस परमतत्त्व की सत्ता से उभदासित है उसी का स्वरूप हैं उनका न कोई शत्रु और न कोई मित्र है । जिस भाव से भक्त या मित्र के कल्याण की कामना होती है वह शत्रुवत व्यवहार करने वाले का भी कल्याण चाहते हैं । माता लूणादे के कुत्सित विषय वासना निरासक्त भक्त पूरण या चौरंगीनाथ ने मातृत्व की भावना को गंगा जल की तरह पवित्रता प्रदान की, पुनः राजवंश की परम्परा को अपने तपोबल से रिसालू नामक पुत्र देकर अक्षुण्य रखा, मां इन्छरादे को नेत्र ज्योति प्रदान कर शत्रु या मित्र की समशीलता एवं समदर्शिता प्रदर्शित की ।

सन्तों को, महात्माओं को संचय या संग्रह की कामना नहीं रखनी चाहिए । त्याग से ही वह विश्व के गौरव को प्राप्त करता है । जो वस्तु, या द्रव्य संसार की है संसार के लिए विश्व कल्याण भाव से लौटा देना चाहिए, उसे सत्कार्य समझकर प्रभु के अर्पित कर देना

चाहिए । चौरंगीनाथ ने राजसिंहासन स्वीकार न कर परित्याग कर अपने अनुज रिसालु को दे दिया।

कबिरा खडा बजार में सबकी मांगे खैर ।
न काहूं सों दोस्ती न काहूं सो बैर ।

अन्धकार को मिटाने के लिए दीपक की बत्ती और तेल जलता रहता है । सूर्य जब तक रहता है स्वयं जलता रहता है, तपता रहता है। लेकिन संसार को प्रकाश देता है। मेघ बरसते हैं धान्य से हरियाली से धरती हरी भरी रहती है । इन अवलम्बनों में परोपकार है समशील भाव है । दीप कहे मैं प्रकाश नहीं फैलाऊंगा, लोगों को अन्धकार में ठोंकरें लगेंगी, सूर्य अपनी रश्मियों को समेटे रखे, संसार की क्या दशा होगी । किन्तु मेरे प्यारे भक्तों दीपक, सूर्य और मेघ आदि अपने स्वभाव का परित्याग नहीं करते । उनमें समशीलता है । समदर्शिता है । सच्चा सन्त समशील या समदर्शी होते हैं । नाथ सम्प्रदाय के धर्म ध्वज परमकीर्तिवान महायोगी गोरक्षनाथ जी एवं उनके शिष्य चौरंगीनाथ जी सर्वत्र भ्रमण करते हुए जन-2 की कलुषिता, भ्रान्तियों को मिटाते हुए योग विद्या का प्रचार करते हुए भ्रमण किया करते थे । लोग आत्मोत्थान की सोचें, उनका कल्याण हो ।

लेखिका की यह द्वितीय कृति की विषय सामग्री योगियों की योग क्षमताओं, उनकी शक्तियों और अटल ध्रुव मार्ग का दिग्दर्शन कराती है। सन्त का चरित्र

चित्रण करना मनुष्य की सामर्थ्य नहीं है, उन्हें शब्दों की सीमा से सीमित नहीं किया जा सकता । उनमें अपार शक्तियां, क्षमतायें विद्यमान रहती हैं । संसार काल के अधीन रहता है । सन्त काल से भी परे हैं भूत -भविष्य वर्तमान तीनों में उनकी गति है । गोरक्षनाथ जी एवं चौरंगीनाथ जी त्रिकालज्ञ महान योगी थे । वे आज भी अदृश्य रूप में संसार में विचरण करते हैं । इस उदीयमान लेखिका की कृति श्रद्धावान भक्तों, सन्तों के घर -2 पहुंचे । इसमें पूज्यपाद युग प्रवर्त्तक शिव स्वरूप गोरक्षनाथ जी एवं चौरंगीनाथ जी की साधना उनके योगबल की कीर्ति समाहित है ।

मैं इनके उत्साह एवं श्रमशीलता की मंगल कामना करते हुए आशीर्वाद देता हूं कि यह सर्वोपरि भावों से परिपूर्णता को प्राप्त करे । जन -2 का कल्याण हो, मनुष्य के मानस से मलिनता मिटे जीवन में प्रकाश ही प्रकाश रहे । कभी भी अन्धकार अपने पग न पढा सके।

श्री बाबा मस्तनाथ के पदाम्बुजों के पग रज की बार -बार वन्दना करता हूं ।

जय बाबा मस्तनाथ जी महाराज की ।

शुभेच्छुक

महन्त चाँदनाथ योगी

मठाधीश मठ अस्थल बोहर, रोहतक (हरियाणा)

प्राक्कथन

काल की अवाघ गति अखिल ब्रह्माण्ड नियन्ता सृष्टा, पालन कर्ता, सर्वेश्वर ब्रह्म के अधीन रहती है। यह आवश्यक नहीं हमेशा अन्धेरा ही अन्धेरा रहे, हमेशा उजाला ही उजाला रहे, हमेशा सूर्य तपन देता रहे, चाँद शीतलता बिखेरता रहे । नदियां कलकल निनार्दित होती रहें, हमेशा पतझड ही बना रहे, या हमेशा ऋतुराज का साम्राज्य बना रहे । सुख -दुःख, जीवन-मरण,यश-अपयश, सुकाल-दुष्काल, मान-अपमान आदि स्थिर नहीं हैं, निरन्तर परिवर्तित होते रहते हैं । हम अनुकूलता में आनन्दित होते हैं, प्रतिकूलता में दुःखित । इन सबका प्रभाव हमेशा चेतन मन से सम्बन्धित होता है। चेतन तत्व तो इन सबसे निर्लिप्त है, निस्पृह है उसके लिए सब निरर्थक ये मन के विषय हैं उसके लिए सब निरर्थक ये मन के विषय हैं। हमारा मन जब आसक्ति को प्रापत हो इन्द्रिय सुखों की कामना करता है तो उस इन्द्रिय के वशीभूत होकर यदि हम अतिरेक को प्राप्त होते हैं तो वही अतिशयता दुःख का कारण बनती है । सांसारिक कर्मो से बिलकुल विरत होना पलायन वृत्ति होती है। सांसारिक कृत्यों को कालानुसार ऋषि, महात्माओं, सिद्ध योगियों के विभिन्न चरित्रों के आचरण के अनुरूप जीवन में व्यवहार करना चाहिए।

परहित सरस धर्म नहिं भाई ।
पर पीडा समनहिं अघ माई ।।
सत्य समाज धर्म नहिं दूजा ।

ब्रह्म पूर्ण है जीव अंशी है, सम्पूर्ण जगत का कर्त्ता जीव नहीं, ब्रह्म सर्वज्ञ है जीव विशेष बुद्धिमान होते हुये भी अल्पज्ञ हैं ।

सन्त, पुराण, वेद, उपनिषद, आदि जिसको नेति नेति कहते हुए निरन्तर गुणगान करते हैं । किन्तु उसको किसी सीमा में नहीं बांध सकते है । उस सनातन, शाश्वत ब्रह्म से सम्बन्ध की स्थापना हर पन्थ सम्प्रदाय, धर्माचार्यों ने अपने -2 ढंग से की । धन स्थायी नहीं, जीवन की अवस्था स्थायी नहीं है कल बचपन था आज युवावस्था है और कल वृद्धावस्था आनी है ।वह ब्रह्म चिन्तन जो भी जिस सम्प्रदाय में जिस सद्गुरू की चरण रज का अनुग्रह प्रसाद धारण कर चुका है वह नित्य नियमित अभ्यास और वैराग्य की मनोवृत्ति का अवलम्बन कर जीवन में अग्रसर हो तभी मानव मात्र का कल्याण है ।

भारत भूमि सन्त प्रसुता रही है । विश्व गुरू का पद प्राप्त यह देश आज पुनः भ्रमित, पाश्चात्य सभ्यता की चमक दमक में अपनी संस्कृति के स्वरूप की विकृत कर रहा है । ऐसी परिस्थिति में दिग्भ्रमित युवा बहिनों, माताओं, भाईयों सभी के लिए उस प्राचीन भारतीय संस्कृति -सभ्यता जिससे हम गोरवन्वित होते रहे हैं।

निरन्तर ह्रास की ओर गतिमान है । उनकी पुनः स्थापना के लिए हमें सनतों महात्मओं, सिद्धों, योगियों, आश्रमों ओर मठों की शरण में जाना चाहिये । जहां राग वहां त्याग नहीं, जहां त्याग है वहां ही प्रेम है, वात्सल्य है, सन्मार्ग की प्रेरणा है, समाज की विकृतियों और दुष्प्रवृत्तियों का विनाश है । ज्ञान कहीं से मिले बुरी बात नहीं किन्तु साथ में समाज की विनाश की और अग्रसर करने वाले तमाम चलचित्रों के माध्यम से सर्वांगीण विकास की दुहाई देने वाले समाचार पत्रों पर युवा बहिनों के नग्न चित्रों को देखकर हमारी संस्कृति की आत्मा को ठेस लगती है । समाज सुधार की और नहीं बिगाड की और जा रहा है।

ऐसे में लेखिका की पुनीत लेखनी से किञ्चित उत्क्रेरित महासिद्ध चौरंगीनाथ के जीवन चरित्र के उधरणों से जो संसार को आलोक मिलेगा उधरत किये भावों में उतिशय प्रिय भाव –

समुझतिं सरिस नाम अरूनामी
प्रीति परस्पर प्रभु अनुगामी ।
नाम रूप दुइ ईश उपाधी ।
अकथ अनादि सुसामुसि साधी ।
कलियुग केवल नाम अधारा ।
सुमिरि –सुमिरि नर उतरहिं पारा ।
सुक सनकादि सिद्ध मुनि जोगी ।
नाम प्रसाद ब्रह्म सुख भोगी ।।

सत्य युग में मनुष्य (साधक) की आयु अधिक होने से समाधि या तपस्या द्वारा, आत्मतत्व को प्राप्त होते थे । त्रेता युग में यज्ञ, दानादि, द्वापर में योग और ध्यान से प्रभु या आत्म तत्व का बोध होता था किनतु वर्तमान कलियुग में मात्र भगवन्नाम के निरन्तर जप करने से सहज ही भवसागर से पार उतर जाता है । नाम ओर नामी में परस्पर अगाध प्रीति है । नाम जाप से मन की कलुषिता धुल जाती है । परिमार्जन हो जाता है । प्रभु के अनन्त रूप हैं, अनन्त नाम हें, अनन्त कथायें हैं । नाम स्मरण से प्रभु स्वयं चले आते हैं । नाम ने अनगिनित का उधार किया । यह वर्णन कृत युग से कलियुग तक के अन्तराल में भरा पडा है । परन्तु नाम से ही नहीं जब तक आचरण नामी के अनुसार न हो । पथ है, पथिक हैं किन्तु उस पथ पर गति नहीं करेगा, चलकर नहीं जायेगा, रम तो करना पडेगा, गन्तव्य पर तभी पहुंच सकेगा । आदिनाथ शिव द्वारा प्रदत्त सन्मार्ग, धर्ममार्ग, तत्वमार्ग और योग साधना के द्वारा अमृत तत्व की प्राप्ति होती है और यह सुलभ है। जब सच्चे सिद्ध और पहुंचे हुये संत की संगति क्षण भर के लिए भी हो जावे और उसकी अनुकम्पा हो जाय तो इन चारों फलों की प्राप्ति होती है ।

किन्तु सुनि समुझाहि जन मुदित मन मज्जाहि अति अनु राग।
लहहिं चारि फल अछत नतु साधु समाज पयाग ।

संतों की वाणी सुनिये सुनकर छोड मत दीजिये अथवा इसे बायें कान से सुनकर दायें से या दायें से सुनकर बायें से न निकाल दे । उसको समझने के लिए चिंतन करे और वह भी भार समझकर नहीं अनुराग के साथ साधु समाज के सागर में स्नान करने से मन की मलिनता साफ हो जायगी, निश्चित ही चारों फलों की प्राप्ति होती है ।

बिनु सत्संग विवेक न होई ।

साधु पुरूषों की वाणी, भगवतसम्बन्धी कथा, ईश्वरीय वार्ता ही साधुओं से, सन्तों से करनी चाहिये । उनका एक -एक क्षण प्रभु के आराधन, ध्यान, मनन एवं चिन्तन में व्यतीत होता है । व्यर्थ की बातों को सन्तों के समक्ष नहीं प्रस्तुत करना चाहिये, वे अपराध के भागी होते हैं । उनके चरण रज को शिरोधार्य कर सेवा द्वारा प्रसन्न करना चाहिए । सन्त द्रव्य के भूखे नहीं, और न ही किसी अन्य वैभव के बल्कि वे सिद्धियों और निधियों से ऊपर उठकर संसार से ऊपर उठकर संसार को धर्म का मार्ग दिखलाते हैं । जिससे राष्ट्र में अपराध, असहिष्णुता, अशौच, असंयम भ्रष्टाचार आदि से त्राण मिले ।

लोक हिताय - चन्द्रावतार चौरंगीनाथ एवं शिवावतार भगवान भूतभावन, भूतधिपति महादेव गारेक्ष रूप में इस लोक में अवतीर्ण हुये ।

" जिन खोजा तिन्ह पाइआं, गहरे पानी पैठा"

जिन लोगों ने ऐसे संतों की मनसा वाचा कर्मणा सेवा की, उनका सानिध्य किया, संगति की, उन्हें संसार की हर सम्पदा एवं ऐश्वर्य की उपलब्धि हुई।

संत और सलिल एक जगह टिकते नहीं हैं । भ्रमण करते रहते हैं । इसी तरह मेघवत् सरिता की तरह तरल -सरल गुरू -गोरक्षनाथ जी और चौरंगीनाथ जी समाज का देश का धर्मोपदेश द्वारा कल्याण करते रहे ।

जनमानस में उनके द्वारा दिये गये शाबर मंत्र कलिकाल में कितने लोकोपकारी हैं, यह तो पूरी दुनिया जानती है । गुरू गोरक्षनाथ जी की कृपा से चौरंगीनाथ के अंगों का पूर्ण होना जिससे वह पूर्ण भगत या चौरंगी कहलाये । ये भी सिद्धियों में निष्णांत हो ब्रह्मतत्त्व को प्राप्त हुये । उन सभी सन्तों द्वारा दर्शाये मार्ग पर सामान्य जनों को प्रेरणा मिलती है जो श्रद्धा और भक्ति से उनके उपदेशों का अनुसरण करते हैं । गुरू गोरक्षनाथ जी शिव स्वरूप में सबका कल्याण करते हैं । इस पुस्तक के माध्यम से उनके चरित्र का साधुओं के प्रति श्रद्धा का एवं युवक और युवतियों में हितकर भावों का प्रादुर्भाव हो जन -2 का कल्याण हो, सभी सन्मार्गी हों । गुरू गोरक्षनाथ जी, सिद्ध चौरंगीनाथ जी एवं बाबा मस्तनाथ जी के पादारविन्दों में कोटिशः वन्दन है, नमन है।

महन्त चाँदनाथ योगी

इस पुस्तक के कलेवर की श्री वृद्धि तो सिद्ध बाबा मस्तनाथ जी की महान कृपा का प्रसाद है । उन सन्त महानुभावों को साधुवाद देती हूं जिन्होंने अपनी वाणी से अपने उपदेशों से मेरी सहायता की । विशेषकर पुजारी जी श्री हजारीनाथ जी, योगी महासभा के महामंत्री योगी श्री आनंदनाथ जी, योगी राकेश नाथ जी, योगी विलास नाथ जी योगी प्रमोदनाथ जी, कैलाश नाथ जी, लक्ष्मणनाथ जी के सहयोग के लिए चरणों में नतमस्तक हूं ।

मैं श्री बाबा मस्तनाथ आयुर्वेद कालेज अस्थल बोहर के भूतपूर्व प्राचार्य डा0 विश्राम सिंह जी के सहयोग के लिए भी आभार प्रकट करती हूं जिनका समय -2 पर मुझे सहयोग मिलता रहा ।

आज की मंगलकारी तिथि को मां सरस्वती के प्रादुर्भाव दिवस के रूप में पुण्य दिन चन्द्रवार चन्द्रावतार चौरंगीनाथ के श्री चरणों में एवं गुरूवर्य प्रातः स्मरणीय श्री चाँदनाथ जी महाराज के श्री चरणों में इस कृति के पुण्य सुवासित सुमन सादर समर्पित हैं । पुस्तक में पाठक वृन्द को कहीं त्रुटि दृष्टि गोचर होती है तो मुझे पत्र द्वारा अवगत कराकर अवश्य अनुग्रहित करें । मैं इसे अपना सौभाग्य समझूंगी । त्रुटियों के लिए क्षमाप्रार्थी हूं । कृतज्ञता सहित ।

शिवानी शर्मा ।

विनम्र -निवेदन

चन्द्रावतार सिद्ध चौरंगीनाथ (पूरण भगत) की इस पुण्यतम कृति को लिखकर मैं अपने किसी पूर्वजन्म कृत कर्म की प्रेरणा अथवा जाने -अनजाने में किये हुये किन्हीं पुण्यों का प्रताप समझती हूं । सिद्धों के चरित्र एवं जीवन लीला को जानना सागर में डुबकी लगाकर रत्नों को खोजना है । जहां तक बुद्धि गम्य है मैंने उन्हीं की प्रेरणा एवं पूज्यपाद श्री श्री 1008 चाँदनाथ जी योगीश्वर की कृपा से लिखने का प्रयत्न किया है । इस पुस्तक के अन्तराल में समाहित पूरण भगत के आद्योपान्त जीवन चरित्र को दर्शाया गया है । स्यालकोट नरेश शालिवाहन के पुत्र रूप में श्रापित चन्द्रदेव अवतीर्ण हुये । जिन्होंने शिव अवतार गुरू गोरक्षनाथ जी को गुरू रूप में पाकर परम तत्त्व को प्राप्त किया । अस्थल बोहर भूमि ही प्रधानतः इनकी योग साधना एवं तपः स्थली रहा है । अपनी लेखनी के माध्यम से विभिन्न विभूतियों से उपलब्ध ज्ञान एवं जानकारियों को लिखने का प्रयत्न किया । बाबा भंभूल नाथ द्वारा लिखित पुस्तक नित्यकर्म संचय के अंश की माला को एक मोती की भांति इसमें पिरोया । विभिन्न स्थानों पर जाने का भी मुझे सुअवसर मिला । वहां से चौरंगीनाथ जी के चरित्र सम्बन्धी बहुत से कथानक मिले । जिन योगियों के कृपा प्रसाद रूप में

आज शुभ तिथि बसंत पंचमी चन्द्रवार दिनांक 11.2.2008 को इस लघु प्रयास को पूर्ण कर पायी । कृति की सफलता पाठक वृन्द एवं भक्त जनों के लिए कितनी उपादेय होगी यह भविष्य की कोख में निहित है । मेरी सफलता उसी पर निर्भर है ।

आज का व्यक्ति सूक्ष्म से स्थूल की ओर दौड रहा है । असलियत से दिखावट एवं बनावट की और जा रहा है । ज्ञान सूक्ष्म है वह दिखावे में नहीं है । सूक्ष्मता के लिए दृष्टि भी सूक्ष्म होनी चाहिए । इसके लिए अन्वेषण की आवश्यकता है । सदगुरू की चरण रज की उपासना करनी चाहिए । मेरी श्री सिद्ध शिरामणि बाबा मस्तनाथ जी से प्रार्थना है कि मुझ में अहंकार रूपी शत्रु प्रविष्ट न हो । यह मेरी लेखनी तेरे ही प्रसाद और भगवती वीणा वादिनी की अनुकम्पा है ।

लेखिका
शिवानी शर्मा।

अनुक्रम

क्र.सं.	अध्याय	पेज नं.
1.	चन्द्रमा को शिव द्वारा श्राप दिया जाना	1
2.	महासिद्ध श्री चौरंगीनाथ जी का जन्म	4
3.	राजा शालिवाहन द्वारा पुनः स्वयंवर रचाना	7
4.	रानी लूणादे का मिथ्या स्वांग रचाना	10
5.	एक जनश्रुति के अनुसार	12
6.	शिवातार महायोगी गुरू गौरक्षनाथ द्वारा कृष्ण को पूर्णांग करना	14
7.	पूर्ण वाले कूएं को सन्तान प्राप्ति का वरदान	18
8.	रानी सुन्दरादे का गोरक्षनाथ जी से पूर्णनाथ को वर रूप में प्राप्त करने का आग्रह	19
9.	सिद्ध चोरंगीनाथ का गुरू आज्ञा से पुनः अपनी राजधानी लौटना	27
10.	राजा सहित मंत्रियों का बाग की ओर प्रस्थान	32
11.	रानी लूणादे और दासियों द्वारा राजा के समक्ष अपराध स्वीकारना	37
12.	चौरंगीनाथ द्वारा अपनी पूज्य माँ इन्छरादे को ज्ञानोपदेश देना	41
13.	हिमालय में चन्द्रभागा तट पर तपस्या	45

क्र.सं.	अध्याय	पेज नं.
14.	माँ ज्वाला जी का आशीर्वाद प्राप्त करना और नव रात्र मेले में रोगियों को रोग मुक्त करना	48
15.	चौरंगी खाल में तपस्या	53
16.	सांगलद्वीप की राजकुमारी श्यामवती की प्रयाग कुंभ मेले में गोरक्षनाथ जी से व चौरंगीनाथ जी से तांत्रिक लड़ाई लड़ना	54
17.	नवनाथ कथा	58
18.	चौरंगीनाथ जी द्वारा गरीब भक्त को स्वर्ण वरदान रूप में देना	77
19.	किसान के पात्र को अक्षय भोजन का वरदान	79
20.	काशी में आगमन	81
21.	नालपुर बिस्सा की ओर प्रस्थान	83
22.	गुरू गोरक्षनाथ जी द्वारा अटन पटन शहर का योगियों का निरादर करने पर ध्वस्त करना	84
23.	मां इन्छरादे की अन्तिम इच्छा पूरी करना	86
24.	हरियाणा अस्थल बोहर में आगमन	87
25.	माह चौदस को साक्षात दर्शन	88
26.	खांड के बोरे नमक में परिवर्तित	89
27.	बारह वर्ष तक गुफा में साधना	91
28.	पहरावर गांव का बसना (जनश्रुति)	93

क्र.सं.	अध्याय	पेज नं.
29.	सिद्ध चौरंगीनाथ जी की शिष्य परम्परा	95
30.	लाढ़ौत गांव के लोगों की पानी की समस्या दूर करना	98
31.	बकरी का दूध चमत्कारिक रूप से स्वयं निकलना	101
32.	सैनिकों की रक्षा	103
33.	सिद्ध चौरंगीनाथ जी द्वारा बाबा मस्तनाथ जी की महायात्रा के विषय में जानकारी प्राप्त करना	104
34.	सिद्ध चौरंगीनाथ - नाथाष्टक	106
35.	श्री चौरंगी चालीसा	108
36.	आरती	110
37.	श्री बाबा मस्तनाथ जी एवं श्री बाबा चौरंगीनाथ मन्दिर की प्राचीनता एवं उसका आध्यात्मिक महत्त्व	111

चन्द्रावतार सिद्ध चौरंगीनाथ

(पूरण भगत)

लेखिका

शिवानी शर्मा

प्रकाशक : मठ अस्थल बोहर, रोहतक

चन्द्रमा को शिव द्वारा श्राप दिया जाना

महासिद्ध श्री चौरंगीनाथ जी चन्द्र देवता के अवतार थे। चौरंगी नाथ जी अठारह भार वनस्पति कहे जाते हैं। नवनाथ सिद्धों में चौरगीनाथ जी अजर अमर हैं।

जिस समय समुद्र मन्थन हुआ था और उसमे से जो विष निकाला था देवताओ की स्तुति करने पर आदिनाथ भगवान शिव ने उस विष को पी लिया था। उसके पीते ही उन्हे अग्निदाह होने लगा। उसी को शांत करने के लिए भगवान आदिनाथ ने शेष को अपने कंठ में धारण कर लिया। भगवान ने चन्द्र को भी उसी समय अपने मस्तक पर धारण कर लिया। चन्द्र देव आदिनाथ की काया में अमृत वर्षा करते रहे। हलाहल का दाह शांत होने पर भगवान ने चन्द्रदेव की स्तुति की। अपनी स्तुति भगवान आदिनाथ के श्रीमुख से सुनकर चन्द्रदेव अहंकार से युक्त हो गया। क्योंकि देवो के देव महादेव ने उनकी स्तुति की। वह मन ही मन विचार करने लगा कि मैंने भगवान शिव को दाह से शीतलता प्रदान की हैं मैं सोलह कलाओं से युक्त हूँ। मैं भगवान के शीश पर शोभायमान होकर बैठा हूँ।

भगवान आदिनाथ शेषनाग जी से कहने लगे- हे शेषनागजी! मैं आपसे अति प्रसन्न हूँ क्योंकि आपने ही

विष दाह से मुझे शीतलता प्रदान की हैं। अतः आप जो भी वरदान चाहे मुझसे ले सकते हो।

शेषनाग जी ने हाथ जोड़कर चरणों में प्रणाम कर गद्‌गद् हो भगवान शंकर से प्रार्थना की, कि हे आदिनाथ! हे देवो के देव! हे सदाशिव! यदि आप मुझसे प्रसन्न हैं और मुझे वरदान देना ही चाहते हैं तो मुझे आप अपना नाथ स्वरूप प्रदान कर योग दीक्षा दीजिए।

भगवान शिव शेष की यह विनती सुनकर प्रसन्न हुए, और उन्हें समय आने पर अपना नाथ स्वरूप प्रदान कर ज्ञान और योग की दीक्षा दी।

इधर चन्द्रदेव यह सब सुन रहे थे और देख भी रहे थे। उनके मन में शेष के प्रति ईर्ष्या उत्पन्न हो गई। वह सोचने लगे कि मैं भी भगवान शंकर से उनका नाथ स्वरूप योग दीक्षा के रूप में माँगू। अतः उन्होने भी आदिनाथ भगवान शिव से कहा - हे प्रभो। आप मुझे भी अपना नाथ स्वरूप दीक्षा के वरदान रूप मे दीजिए।

भगवान शंकर ने चन्द्रदेव से कहा - हे चन्द्रदेव। यह सत्य हैं कि आपने भी अमृत वर्षा कर हमारी काया को शीतलता प्रदान की हैं और दाह से भी हमे मुक्त किया हैं। इसलिए आपको मेरा नाथ स्वरूप अवश्य प्राप्त होगा किन्तु ईर्ष्या भाव से माँगने के कारण आपको मेरा दिया योगी नाथ स्वरूप तो प्राप्त होगा किन्तु श्राप भी भोगना होगा। कलियुग में तुम जिस घर में

उत्पन्न होगें, वही माँ बाप तुम्हारे हाथ - पाँव छिन्न करा कर तुम्हें जंगल में फेंक देंगे। वही पर तुम्हें मेरी तपस्या करनी होगी। तत्पश्चात् तुम्हारा उद्धार करने के लिए मेरा ही अवतार गोरक्षनाथ तुम्हारे पास आकर तुम्हें उस कष्ट से मुक्ति देगा। तभी तुम मेरे नाथ स्वरूप को प्राप्त कर सकोगे।

महासिद्ध श्री चौरंगीनाथ जी का जन्म

देवो के समय मे गान्धर्व देश, स्यालकोट जो आजकल पाकिस्तान में हैं राजा शालिवाहन का राज्य था।

राजा अत्यन्त धार्मिक एवं न्यायकारी था। राजा प्रजा को अपनी संतान की भांति स्नेह करता था। उनके राज्य में प्रजा सुखी ओर सम्पन्न थी। राजा की सुशील, रूपवती एवं पतिव्रता रानी थी जिसका नाम इन्छरादे था। वर्षो बीत जाने के पश्चात् भी उन्हे संतान सुख प्राप्त न हो सका। पुत्र की कामना लेकर राजा समस्त तीर्थ करने के पश्चात् अंत में वह दक्षिण में रामेश्वर धाम पहुँचा। रामेश्वरम् में कृष्णा नदी के तट पर स्यालकोट महाराज ने शिव आराधना की जिससे प्रसन्न होकर भगवान शिव से उन्हें पुत्र - प्राप्ति का आशीर्वाद मिला। आशीर्वाद पाकर वह प्रसन्न चित्त हो अपनी राजधानी स्यालकोट लौट आया। राजा ने रानी इन्छरादे को सारा वर्णन कह सुनाया। रानी सारा वर्णन सुन अति प्रसन्न हुई और वह भगवान के नाम का मन ही स्मरण करने लगी।

एक वर्ष के भीतर ही रानी इन्छरादे ने पुत्र रत्न को जन्म दिया। राजा रानी इस खुशी से फूले नही समा रहे थे।

चन्द्रावतार सिद्ध चौरंगीनाथ (पूरण भगत)

भगवान शंकर के वरदान एवं कृष्णा नदी के तट पर स्तुति करने से उन्हे सन्तान प्राप्ति हुई, इसलिए राजा शालिवाहन ने अपने पुत्र का नाम भी कृष्ण ही रखा।

राजा ने दरबार में बडे बडे ब्राह्मण ज्योतिषियों को बुलाया और राजकुमार कृष्ण का भविष्य जानने का आग्रह किया। राजा ने विनीत भाव से कहा हे विप्रो! आप कृपा कर मेरे पुत्र का भविष्य बताइये कि उसके भविष्य का क्या फल हैं।

ब्राह्मण ने श्री गणपति भगवान को याद किया और अपना अपना पंचांग खोल लिया। राशि, ग्रह, नक्षत्र, लग्न सब कुछ गुणा भाग आदि कर उन्होंने कृष्ण की कुण्डली बनाई। तत्पश्चात् महाराज से कहने लगे –

ध्यान लगा सुन लीजिए बात हमारी महाराज।
राजकुमार के जन्म का साफ हाल सुनाये आज।।

वह कहने लगे – हे महाराज! आगे चलकर यह राजकुमार कृष्ण चक्रवर्ती सम्राट बनेगा या फिर सिद्ध योगी बनकर संसार में लोगो को योग मार्ग की ओर प्रेरित करेगा। ज्योतिषी आगे कहने लगे – महाराज यह भी संभव हैं कि इस बालक पर कोई महाभंयकर कष्ट भी आये और बारह वर्ष तक आप अपने पुत्र कृष्ण का दर्शन भी नहीं कर सकते हैं यदि किये तो उसके कोई अनिष्ट होने की सम्भावना है।

राजकुमार की जन्म कुण्डली के विषय में जानकर राजा अत्यंत दु:खित हुए। उन्होंने कुमार को अपनी दृष्टि से प्रथक् रखकर सेवक और सेविकाओं को उसके लालन पालन के लिए व्यवस्था कर दी। बालक देखते ही देखते बडा होने लगा। छ: वर्ष का होने के पश्चात् उन्होने उसकी शिक्षा के लिए गुरूकुल में भेज दिया।

राजा शालिवाहन द्वारा पुनः स्वयंवर रचाना

पुत्र को गुरूकुल भेजने के पश्चात् राजा ने अपना दूसरा विवाह भी कर लिया। दूसरी रानी का नाम लूणादे था। वह अत्यन्त रूपवती थी। वह छोटी रानी पर अपने प्राण न्यौछावर करते थे। इस छोटी महारानी का आचरण एवं स्वभाव अच्छा नहीं था।

राजकुमार की जन्मकुंडली के अनुसार उसके बारह वर्ष समाप्त होने का समय भी नजदीक आ गया था। मंत्री गणो ने राजा को स्मरण कराया कि महाराज बारह वर्ष पूरे हो गए हैं। अब आप कुमार को महल में बुलवा लीजिए। (यह भी विधि का विधान था कि अभी 12 वर्ष व्यतीत होने में कुछ दिन शेष थे परन्तु मंत्रियो ने राजा को झूठ कहा और कुमार को बुलवा लिया।)

राजा शालिवाहन ने उन पर विश्वास किया और अपने प्राणो से प्रिय पुत्र को महल में बुला लिया।

हर प्रकार से मंगल कार्य कर राजा ने पुत्र को प्रथम बार देखा। महल में कृष्ण के लिए उत्सव का आयोजन हुआ। साधुओं, योगियों और ब्राह्मणों को भोजन कराया गया। दान दक्षिणा आदि दिए गये। तत्पश्चात् राजा ने राजकुमार को अपने हृदय से लगाया। कहने लगे पुत्र! अब तुम अपनी माताओं का भी आशीर्वाद प्राप्त करो। पिताजी की आज्ञानुसार राजकुमार कृष्ण ने उसी प्रकार

सबका अभिवादन किया। तत्पश्चात् वह अपनी माताओं से आशीर्वाद लेने महल में पहुंचे। माँ इन्छरादे के पास पहले न जाकर वह छोटी माँ (विमाता) लूणादे के महल में पहले जा पहुँचे। उन्होंने मन में विचार किया कि छोटी माँ से आशीर्वाद लेकर ही अपनी माँ के पास आशीर्वाद लेने जाऊँगा।

छोटी माँ के महल में पहुँचकर एक शिष्ट एवं आज्ञाकारी पुत्र के समान हाथ जोड़कर माता को सादर प्रणाम किया।

रानी लूणादे नवयुवती थी। उसने कभी भी ऐसे सुन्दर युवक को नही देखा था। राजकुमार रूपवान, तेजस्वी और कमनीय यौवन से भरपूर था। उसकी कांति को देखकर रानी का अन्तर्मन विचलित हो गया। प्रणाम का उत्तर देना वह भूल गई। उसके मन में उथल पुथल मच गई और काम वसना के विचार के पाश में बन्धकर वह कुमार को प्रणय निवेदन करने लगी।

राजकुमार ने पुनः विनय पूर्वक प्रणाम किया तो रानी उसके मीठे वचन, मातृ समबोधन को सुनकर वह नागिनी की भाँति विषयाग्नि की विषैली वासनाओं से भभक उठी।

रानी लूणादे कहने लगी - मैं तुम्हारी माता नही हूँ।

तुम्हारी माता तो वह हैं जिसने तुम्हे जन्म दिया हैं। वह कहने लगी - मेरे विचार तुम्हारे प्रति माता के नही हैं। वह राजकुमार को अपने प्रेम जाल में फँसाने की कोशिश करने लगी। उसने अनेक हथकण्डे अपनाए। कृष्ण को मृत्यु का भय भी दिखाया लेकिन सब व्यर्थ ही रहा। उसने माता के चरणों के सिवाय अपनी दृष्टि को उसके काम पर केन्द्रित नहीं किया। उसने अपनी वासना की तृप्ति के लिये मृत्यु दण्ड का भय भी दिखलाया।

अपनी मातृ सदृश राजकुमार नियति पर अडिग रहा और आँखो में अश्रु लिए वह अपने पिता राजा शालिवाहन के पास महल में पहुँचा। उन्होने पूछा - पुत्र। क्या बात हैं? तुम इतने उदास क्यो हो!

राजकुमार अपने पिता से लिपटकर और फफक - फफक अपनी आप बीती सुनाने लगा। उन्होने सारी घटना पिता के समक्ष सत्य - सत्य कह डाली।

रानी लूणादे का मिथ्या स्वांग रचाना

रानी लूणादे रोती चिल्लाती हुई आई और चीख चीख कर राजा से कहने लगी - महाराज। आपके इस पुत्र ने मुझ पर कुदृष्टि डाली हैं। इसने मुझे अपनी वासना का शिकार बनाना चाहा। मेरे इन्कार करने से इसने मुझे बहुत बुरा भला कहा। हे महाराज। अगर आप मुझसे प्रेम करते हैं। तो इसे इसी समय हाथ - पाँव कटवाकर मृत्यु - दण्ड दीजिए। यदि आप ऐसा नही कर सकते तो मैं अभी इसी वक्त अपने प्राण त्याग दूँगी।

उधर राजकुमार कृष्ण की माँ इन्छरादे को अमंगल दिखाई देने लगे। महल की छत पर उल्लू बोलने लगें। महल के बाहर ओर गलियों में कुत्ते रोने लगे।

राजा को छोटी रानी के प्रेम में अपने पुत्र की तनिक भी चिंता नही हुई उन्होने उसकी बातों पर विश्वास न करके रानी के स्त्री चरित्र के आगे घुटने टेक दिये इसकी बात को ही सच्चा समझा। तुरंत सैनिकों को बुलाया और राजकुमार के हाथ पाँव कटवाकर कहा कि इसे कहीं मारकर फेंक आओ। सैनिक जब राजकुमार को जंगल में मारने लगे तो उसके कान्तिमान मुखड़े को देखकर उनका मन भर आया। जान से मारने की बजाय उसके हाथ पाँव ही कटवाकर शहर से बाहर एक कुएं में

फेंक दिया। महल में पहुंचकर राजा से कहा हम राजकुमार को मारकर फेंक आये हैं।

कृष्ण की माता इन्छरादे रो रोकर विलाप करने लगी। वह लंबी लबी श्वासे लेकर ईश्वर से रोष प्रकट करने लगी। वह बार बार यही कहती जा रही थी कि हे विधाता! आपने मेरे और मेरे पुत्र के भाग्य में ही यह सारे दुःख क्यो लिखे हैं? हे ईश्वर! क्या यही आपका न्याय है?

रोते रोते वह बार बार मूर्छित हो जाती थी। लेकिन छोटी रानी और राजा को उस समय बडी रानी और कृष्ण के प्रति घृणा और रोष का भाव था।

उस प्रकार आदिनाथ भगवान शिव का अभिशाप कि तुम जिस कलियुग में जिसके यहां जन्म लोगे, उन्हीं मां-बाप के सुख से वंचित रहोगे, पूरा हुआ।

इस प्रकार आदिनाथ भगवान शिव का अभिशाप कि तुम कलयुग मे जिसके यहाँ जन्म लोगे उन्ही के सुख से वंचित रहोगे पूरा हुआ।

एक जनश्रुति के अनुसार

गान्धर्व देश स्यालकोट के जंगलों में एक महात्मा जी कुंए पर स्नान कर रहे थे। उसी समय वहाँ दो मुसलमान युवक एक गाय को लेकर आ पहुँचे। वे दोनों महात्मा जी से आग्रह करने लगे कि – हे महात्मन्! हम दोनों कहीं जा रहे थे, किन्तु अपना कोई जरूरी सामान घर में ही भूल आये हैं। आप यदि हमारी थोड़ी सहायता कर दे तो हम अपना सामान जल्दी लेकर आ सकते हैं।

महात्मा जी ने स्नान करते-करते कहा – हम तुम्हारी क्या सहायता कर सकते हैं?

युवक कहने लगे – महात्मा जी! हमारे साथ एक गाय है। जब तक हम अपना सामान लेकर वापस लौटे, तब तक आप हमारी गाय का ध्यान रखना। बस इतनी ही हमारी आपसे प्रार्थना है।

महात्मा जी ने उनकी प्रार्थना स्वीकार कर ली और कहने लगे – जल्दी अपना सामान लेकर आना क्योंकि मेरा सन्ध्या वन्दन का समय होने वाला है।

युवक शीघ्रता से अपना सामान लेने चल पड़े। महात्मा जी भी अपनी पूजा सामग्री तैयार करने लगे। काम करते-2 उनको यह नहीं पता चला कि गाय घास चरते-चरते बहुत आगे निकल गई है।

थोड़ी ही देर के पश्चात् वह दोनों युवक वहाँ आ पहुँचे। उस समय महात्मा जी भी अपनी पूजा आरंभ कर चुके थे। उन्होंने पूछा - महात्मा जी! हमारी गाय कहाँ है? वह कुछ नहीं बोले। किन्तु बार-बार युवकों के पूछने पर महाराज जी ने बिना बोले ही अपने हाथ से इशारा कर दिया कि गाय किस ओर गई है। इशारा पाते ही दोनों युवक उसी दिशा में चल पड़े। वह दोनों कुछ ही दूर पहुँचे थे, कि उन्हें अपनी गाय घास चरते-चरते मिल गई। उन्होंने गाय को पकड़ा ओर सीधे कसाईखाने की ओर चल पड़े। कसाईखाने पहुँचने पर वह दोनों सबसे पहले गाय के हाथ-पाँव काटने को तैयार हुए, गाय ने विचार किया कि उस महात्मा ने ही इन्हें बताया है कि मैं घास चरते-चरते किस दिशा में निकल गई हूँ। उसी की वजह से ये दोनों मुझे यहाँ काटने के लिए ले आये हैं।

गाय ने रोते-रोते और कटते-कटते उस महात्मा को श्राप दिया, कि हे महात्मा! आज जैसे मेरे हाथ-पाँव छिन्न-भिन्न किये जा रहे हैं। उसी तरह तुम्हारे भी एक दिन हाथ-पाँव काटकर जिस कुयें पर तुम तपस्या कर रहे हो उसी में फेकें जाओगे।

कहते हैं कि वहीं महात्मा अगले जन्म में पूरण भक्त के रूप में जन्में, और वही गाय उनकी मौसी लूणादे के रूप में उन्हीं के घर में आई। उसी मौसी ने पूरण पर दोषारोपण करके उसके हाथ-पाँव कटवाकर उसी कुएं में फेंकवा दिया।

शिवातार महायोगी गुरू गौरक्षनाथ द्वारा कृष्ण को पूर्णांग करना

शिव अवतार गोरक्षनाथ जी अपने शिष्यों सहित एक बार भ्रमण करते-करते और श्रद्धालुओं को मार्ग में योग की दीक्षा देते हुए शालिपुर (स्यालकोट) की ओर चल पड़े। नगर से कुछ ही दूरी पर उत्तर दिशा में उन्होंने अपने भक्तों के कल्याण हेतु अपना आसन लगा लिया। यह स्थान राजा ने अपने सैनिकों, घोड़ों की घास के लिए बनवाया हुआ था। इस स्थान पर विविध प्रकार के पशु पक्षी निवास करते थे। यहाँ छोटे-छोटे तालाब और एक कुँआ भी विद्यमान था।

जन्मान्तरीय कर्म के पफलस्वरूप दण्ड की समाप्ति की अवधि पूर्ण हो जाने पर पूरण भक्त (कृष्ण) के पास महाभवरोग के महान वैद्यराज आ पहुँचे है। उनका नाम गोरक्षनाथ जी है। यह महाभव रोग के मोचक साक्षात् शिव है। गोरक्ष (रक्षा करने वाला) अर्थात् संसार में रोग को हरने वाले। ताप और पाप का अन्त करके पूर्ण के साथ कोई चमत्कार होने वाला है। कृष्ण के जीवन में बसन्त ऋतु के पुष्प खिलने वाले हैं।

इस कुयें से थाड़ी ही दूरी पर गोरक्षनाथ जी ने अपना आसन लगाया था, वहीं साथ में उनके कुछ शिष्य

भी ठहरे हुए थे। इसी कुयें गोरक्षनाथ जी ने अपने एक शिष्य को जल लाने के लिए भेजा। शिष्य ने जैसे ही कुएं में पात्र डाला, उसको एक मनुष्य ने अपने मुहँ में पकड़ लिया। यह देखकर शिष्य चकित हो पूछने लगा - हे पात्र को पकड़ने वाले तुम कौन हो? और किस अभिप्राय से यहाँ रहते हो? तुमने पात्र को क्यों पकड़ा है?

यह सुनकर कुएं से आवाज आई - मैं इसी नगर के राजा शालिवाहन का पुत्र हूँ। मेरा नाम कृष्ण है। शिक्षा पूरी होने के पश्चात् जब मैं महल में गया तो सर्वप्रथम अपनी छोटी माता के महल में उनसे आशीर्वाद लेने गया। वह मुझे देखकर मोहित हो गई और अपनी वासना तृप्ति के लिए मुझसे आग्रह करने लगी। मैनें किसी भी प्रकार उनके आग्रह को स्वीकार नहीं किया। यह देख उन्होंने मेरे ऊपर दोषारोपण किया ओर राजा को अर्थात् मेरे पिताजी को मेरे विरूद्ध भड़का दिया। जिससे पिताजी का हृदय अत्यंत विक्षुब्ध हुआ। पिताजी ने मेरी एक न सुनी। छोटी माता की बातों में विश्वास करके पिताजी ने मुझे सैनिकों के सुपुर्द कर दिया। उन्होंने मेरे ऊपर दया करके मुझे जान से तो नहीं मारा, किन्तु मेरे हाथ-पाँव काटकर मुझे कुएं में डाल दिया। बस उसी दिन से मैं यहाँ पड़ा हूँ और सदैव शिव-गोरक्ष के ध्यान में रहकर ही अपना जीवन व्यतीत कर रहा हूँ। अपनी सारी व्यथा

बताने के पश्चात् उन्होंने पूछा - आप कौन हैं? और कहाँ से पधारे हैं?

शिष्य पवननाथ ने कहा - हे विपत्ति के मारे! मै गोरक्षनाथ जी का शिष्य हूँ और उन्हीं के लिए कुएं से जल लेने आया था। लेकिन आपकी दु:खभरी कहानी सुनकर मेरा मन अत्यन्त दु:खी हो रहा है। मै अभी अपने गुरूदेव को जाकर इस घटना की जानकारी देता हूँ। वह अवश्य तुम्हारी सहायता करेगें।

शिष्य ने जाकर पूरी घटना गुरूदेव को कह सुनाई। पूरी घटना सुनकर गुरूदेव ने अपनी दिव्य दृष्टि से देखा कि कृष्ण की कोई गलती नहीं है। उन्होंने उसे बाहर निकाल दिया। गोरक्षनाथ जी के स्पर्श से ही कृष्ण ठीक हो गया उसके हाथ और पाँव भी पहले की भाँति ही हो गए। वह गोरक्षनाथ के आशीर्वाद से एकदम स्वस्थ हो गया। ठीक करने के पश्चात् गुरूदेव ने कृष्ण से कहा - अगर अब तुम सोचते हो कि तुम्हारे ऊपर कोई विपत्ति नहीं आयेगी तो तुम अपने महल में जाकर अपने माता-पिता की सेवा करो।

यह सुनकर राजकुमार कृष्ण ने जाने से इंकार कर दिया। तत्पश्चात् श्री नाथ जी ने कृष्ण कहा - पुत्रा! यदि तुम नहीं जाना चाहते तो हमारी मंडली में शामिल हो जाओ। हम तुम्हें योग तत्व विद्या में पूर्ण बना देगें। यह कहते हुए श्री नाथ जी ने कृष्ण को अपनी मंडली में

शामिल कर लिया। वहाँ से गमन कर कश्मीर श्री नगर में अमरनाथ गुफा में जा पहुँचे। ठीक उसी स्थान पर जहाँ आदिनाथ भगवान शिव ने पार्वती माता को गुह्य ज्ञान सुनाया था। अर्थात् वही स्थान जहाँ अमरकथा सुनाई गई थी। उसी स्थान पर श्रीनाथ जी ने कृष्ण को योग मार्ग की दीक्षा दी। योग में पूर्णता प्राप्त करने के पश्चात् ही कृष्ण का नाम पूर्णनाथ तथा चारों हाथ-पाँव काटे जाने पश्चात् ही आप चौरंगीनाथ के नाम से प्रसिद्ध हुए।

पूर्ण वाले कूएं को सन्तान प्राप्ति का वरदान

सियालकोट नगर से बाहर लगभग पाँच मील की दूरी पर अब भी यह कुआ विद्यमान है। श्रद्धालुजन उस को पूर्ण भक्त से सम्बन्धित 'पूरण भगत वाला कुआ' के नाम से पूकारते हैं। पहले वहाँ जंगल हुआ करता था लेकिन आजकल वहाँ एक गाँव आबाद है। उस गाँव का नाम भी 'पूरण वाला' ही है।

पूरण भक्त वाले कूए के विषय में यह ख्याति है कि उस कुए के जल में घाव भरने की 'अद्‌भुत क्षमता' है और कुए पर स्नान करने से नि:सन्तान महिलाओं को सन्तान प्राप्त हो जाती है। (यह पूरण भक्त का आशीर्वाद उस कुए को है) इसी आस्था से प्रेरित होकर अब भी सहस्त्रों महिलाऐं उस कुए पर स्नान करने आती हैं।

गुरू गोरक्षनाथ जी द्वारा कृष्ण को पूर्णांग करना

रानी सुन्दरादे का गोरक्षनाथ जी से पूर्णनाथ को वर रूप में प्राप्त करने का आग्रह

गुरू गोरक्षनाथ जी ऊपर हिमालय के अनेकों प्रांतों में भ्रमण करते हुए अपनी शिष्य मंड़ली के साथ नीचे प्रांतो में योग प्रचार के लिए चल पड़े। कुछ समय नीचे मैदानी प्रांतों में प्रचार करने के पश्चात् श्रीनाथ जी चीन देश में पिलांग टापू जा पहुँचे। उस समय वहाँ राजकुमारी सुन्दरादे का शासन था। गोरक्षनाथ जी ने वहां पर पूर्व निर्मित गुपफा में विश्राम का विचार किया और अपनी शिष्य मण्डली के साथ वहीं ठहर गये।

जिस समय राजकुमारी सुन्दरादे का जन्म हुआ उसके माता-पिता अर्थात् राजा और रानी अत्यंत प्रसन्न हुए। समस्त चीन देश में उत्सव मनाया गया। ब्राह्मणों और गरीबों को दान-दक्षिणा, वस्त्रा, आभूषण आदि भेंट में दिये गये।

राजा ने ज्योतिषियों को बुलाया ओर अपनी प्रिय पुत्री की जन्मकुण्डली बनवाई और ज्योतिषी कहने लगे - महाराज! 'राजकुमारी का भविष्य चारों और से अच्छा ही अच्छा है। किन्तु इसका विवाह किसी राजघराने के योगी से होगा और वही इसकी मौत का कारण बनेगा। यह सुन राजा का हृदय अत्यंत दुःखी हुआ। मास बीतते गये वर्ष

बीतते गये, राजकुमारी ने यौवन की दहलीज पर कदम रखा। इधर राजा भी वृद्ध हो चुके थे। पुत्र न होने की वजह से उन्होंने विचार किया कि अब पुत्री राजकुमारी सुन्दरादे को ही शासन की बागडोर सौंप देनी चाहिये। शुभ मुहुर्त देख राजा ने उसे सारा राज-पाट दे दिया और साथ में राजकुमारी को उसकी जन्मकुण्डली के विषय में भी बताया।

राजकुमारी ने अपने पिताश्री से अपनी जन्मकुण्डली के विषय में जानकारी प्राप्त की और वह उन्हें बहुत देर तक आश्चर्य चकित निगाहों से निहारती रही। उसी क्षण से राजकुमारी के हृदय में साधु-योगियों के प्रति ईर्ष्या उत्पन्न हो गई। उसी क्षण राजकुमारी ने अपने राज्य में घोषणा करा दी कि हमारे राज्य में कोई साधु न आने पावे। यदि भूल से कोई आ भी जाता तो वह तलवार से उसका सिर धड़ से अलग कर देती थी। इस प्रकार राजकुमारी ने 1800 योगियों को मौत के घाट उतार दिया।

गुरू गोरक्षनाथ जी ने पिलांग टापू जाने का कार्यक्रम की एक विशेष उद्देश्य से ही बनाया था। गोरक्षनाथ जी ने पूर्णनाथ से कहा - पुत्र जाकर नगर से भिक्षा लेकर आओ। साथ ही पूर्ण को यह भी समझा दिया कि वह महल में न जाये। क्योंकि रानी योगियों को पकड़कर मरवा देती है। लेकिन इस बात का भेद जानने के लिए

पूर्णनाथ जी घूमते-घूमते सुन्दरादे के राज्य में भिक्षार्थ पहुँच गये।

शहर में तैनात सैनिक ने पूर्णनाथ जी को पकड़ लिया और पूछा - जो सारा जग जानता है तुम नहीं जानते। हमारे राज्य में आने वाले हर एक योगी को रानी मरवा देती है। फिर व्यर्थ में ही सोने जैसी अपनी कंचन काया को क्यों समाप्त करने आये हो।

पूर्णनाथ जी ने कहा - सैनिक भक्त! जोगी को जीने मरने की चिंता नहीं रहती। मुझे तो रानी से ही भिक्षा लेनी है। जाकर उनसे कह दो।

रानी ने सैनिक की बात सुनकर पूर्णनाथ को भिक्षा देना स्वीकार किया। एक हाथ में भिक्षा तथा दूसरे हाथ में तलवार लेकर चली। मन ही मन विचार करने लगी एक हाथ से भिक्षा दूँगी तथा दूसरे हाथ से जोगी का सिर घड़ से अलग कर दूँगी। योगी पर नजर पड़ते ही राजकुमारी ने म्यान से तलवार निकाली और वह उन पर वार करने लगी। पूर्णनाथ जी ने गुरू के दिये हुए मंत्र से राजकुमारी की तलवार का उसी के हाथ में पाषाणवत स्तंम्भित कर दिया।

राजकुमारी योगी पूर्णनाथ को बहुत देर तक एकटक निहारती रही। वह उनकी यौगिक शक्ति से व उनके रूप से इतनी प्रभावित हुई कि मन ही मन वह उनको अपना

हृदय दे बैठी। क्योंकि वह अपने से अधिक शक्तिशाली पुरूष से ही विवाह करना चाहती थी।

पूर्णनाथ जी ने राजकुमारी से आग्रह किया, वह उन्हें शीघ्र ही भिक्षा दे। राजकुमारी ने अत्यंत रूचिकर भोजन तैयार किया और पूर्णनाथ जी के साथ भोजन लेकर गुरू गोरक्षनाथ जी के समक्ष पहुँच गई। और उन्हें भोजन कराया।

गोरक्षनाथ जी भोजन करके अत्यंत प्रसन्न हुए और कहने लगे - देवि! तुमने अत्यंत रूचिकर भोजन कराकर हमारी आत्मा को तृप्त किया है। अतः तुम जो भी चाहो वह वरदान हमसे माँग सकती हो।

सुन्दरादे ने गोरक्षनाथ से वरदान के रूप में पूर्णनाथ जी को माँग लिया। वचन में बँधे गोरक्षनाथ जी ने पूर्णनाथ को आशीर्वाद दिया और सुन्दरादे के साथ विदा कर दिया। अनुचित कृत्य होने पर भी गोरक्षनाथ जी ने यह कार्य किया। क्योंकि वह सुन्दरादे को वरदान दे चुके थे। पूर्णनाथ की इन्द्रिय संयम की यह परीक्षा की घड़ी भी थी।

पूर्णनाथ जी ने गुरू आज्ञा शिरोधार्य की, और गुरू चरणों में शीश नवाकर वह चलने लगे। उनको यह भली भाँति ज्ञात था कि यदि विधाता कोप करे तो गुरू रक्षा करते है। परन्तु यदि गुरू क्रोध करे तो जगत में उसे

बचाने वाला कोई नहीं। दोनों को आशीर्वाद देकर गोरक्षनाथ जी आगे भ्रमण के लिए निकल पड़े।

पूर्णनाथ को वर के रूप में प्राप्त कर वह अपने आप में फूली नहीं समा रही थी। मन **ही** मन वह अत्यंत प्रसन्न थी। उन दोनों ने एक ही साथ महल में प्रवेश किया।

पूर्णनाथ जी ने सर्वप्रथम सुन्दरादे से योगियों के मारने का कारण पूछा। रानी ने कहा - जैसा कि मेरी जन्मकुंडली में बताया गया था। मात्र उसे पहचानने के लिए ही मैं उनका वध कर देती थी। अब मुझे विश्वास हो गया कि आप ही मेरे पति है। अब आप मुझे अपनी पत्नी के रूप में स्वीकार कीजिए।

श्री पूर्णनाथ जी ने कहा - रानी सुन्दरादे! मुझे संसार के मायाजाल में उलझाने की कोशिश मत करो। सुन्दरादे की समझ में उस समय कुछ नहीं आ रहा था। वह तो केवल पति को पाकर इतनी प्रसन्न थी। जितनी एक बूँद को पाकर चातक को प्रसन्नता होती है।

सुन्दरादे ने अपने मंत्रियों को आदेश दिया - कहने लगी - पूरे नगर को जाकर खूब सजा दो, सबको खूब दान दक्षिण और वस्त्र आभूषण भेंट करो।

सुन्दरादे को इतना भी मालूम नहीं हुआ कि कब सूर्य देव अस्त हो चले हैं। सायंकाल हो चुका है, मंद-मंद वायु चलने लगी। पक्षीगण अपने आवासों में आकर विविध प्रकार के स्वर से सन्धया के आगमन को सूचित करने लगे। ऐसे सुहावने समय में रानी का अपने

पति पूर्ण के साथ उस वायु का सेवन करने का मन हुआ। वह योगी को लेकर महल की छत पर चढ़ गई।

विधि का विधान अटल है उसे कोई नहीं टाल सकता। सुन्दरादे नहीं जानती थी कि अगले ही पल उसके साथ क्या होने वाला है। वह तो योगी को पाकर खुशी से पागल हुई जा रही थी।

पूर्णनाथ जी ने अपने को मुक्त करने का यही उत्तम समय समझा। गुरूपदिष्ट उदान वायु का निरोध कर महल की दीवार पर बैठे हुए आपने जिस क्षण रानी की दृष्टि से अपने को वंचित देखा, उसी क्षण शरीर को आकाशधारी बना लिया। इस कृत्य से आप ज्यों ही दीवार से कुछ दूर हुए। उसी समय रानी ने इधर-उधर देखते हुए आपके गिर जाने के भय से पकड़ने के लिए अपने हाथ आगे बढ़ाये। पति के प्रेम में लालायित हुई उसने अपने गिरने का कुछ भी विचार नहीं किया। बस फिर क्या था? देखते ही देखते रानी का पाँव दीवार से फिसल गया। अत्यंत वेग से वह नीचे गिर गई। उसी क्षण उसकी ऐहलौकिक यात्राा समाप्त हो गई।

घटना स्थल पर पहुँच, चौरंगी द्रवीभूत।
बोले अगले जन्म में दाम्पत्य सुख हो पूर्ण।।

जहाँ कुछ ही देर पहले मंगल कृत्य हो रहे थे। अब वहाँ उदासी छा गई। चारों और दुःख का साम्राज्य फैल गया।

चौरंगीनाथ जी ने अगले जन्म में उसे अभीष्ट पति मिलने का आशीर्वाद दिया ओर आकाशगति से आगे प्रस्थान किया।

अग्नि का सहज स्वभाव है कि उसके निकट कभी ठंड नहीं जा सकती, और यदि गई तो निश्चय ही नष्ट हो जायेगी। उसी प्रकार योगी पूरणनाथ जी की योगाग्नि से सुन्दरा दे नष्ट हो गई।

आकाशमार्ग से कुछ ही देर में आप अपने गुरू गोरक्षनाथ जी के पास पहुंचे। जो-2 आपके साथ बीता था सब गुरूजी को कह सुनाया। सुनकर गुरूजी प्रसन्न हुए। कहने लगे - पुत्र। तुम संसार सागर से पार होने की इच्छा से हमारा आश्रय ग्रहण कर चुके थे। अतः मन में कदापि यह विचार न लाना कि हमने तुम्हें रांनी के साथ भेजकर पुनः संसार सागर में धकेल दिया। किंतु उसकी प्रार्थना स्वरूप तुम्हारा मेल कराना ही उचित समझा। हमारे मन में यह दृढ विश्वास था कि जिस मनुष्य ने यह वासनात्मक कार्य न करने में अपने शरीर तक के जाने की परवाह नहीं की, वह मनुष्य कभी भी उस कार्य को नहीं करेगा। हमारे विश्वास को पूरा कर तुम समस्त वस्तुओं के स्वामी बन गये हो।

गुरूजी ने पूरण से पूछा - पुत्र! तुमने रानी पर कुछ कृपा दृष्टि भी की है या नहीं?

पूरणनाथ जी ने कहा -गुरूदेव! पति के लिए ही रानी ने इस विषयक दशा का अनुभव किया है। अतः मैं रानी को ईप्सित पति प्राप्त होने का आशीर्वाद से आया हूँ। यह सुनकर गुरूजी अत्यंत प्रसन्न हुए ओर पूरणनाथ को आशीर्वाद देकर आगे को प्रस्थान किया।

भूटान-भोट आदि देशों का भ्रमण करते -2 और योग प्रचार करते -2 आप कलकत्ता जा पहुंचे। कुछ दिन पूर्व निर्मित स्थान पर आसन स्थित कर विश्राम किया। उसके पश्चात कुछ योगी शिष्यों को आपने योग प्रचार हेतु दक्षिण दिशा भेजा। पूर्णनाथ जी से कहा -बेटा तुम एक बार अपनी राजधानी जाओ क्योंकि वहां पर तुम्हारी माताजी तुम्हारे वियोग में नेत्रहीन होकर तुम्हारी दुर्दशा का स्मरण कर न तो मरी है और न जीवित ही है। इसलिए तुम एक बार वहां पर अवश्य जाओ ओर अपनी मां को उस अधम मार्ग से उचित स्थान पर पहुंचाओं। यही हमारा आदेश है।

सिद्ध चोरंगीनाथ का गुरू आज्ञा से पुनः अपनी राजधानी लौटना

सिद्ध योगी चौरंगीनाथ जी गुरू आज्ञा शिरोधार्य कर कलकत्ता से भ्रमण करते -2 एवं मार्ग में योग प्रचार करते -2 एक दिन शालीपुर (स्यालकोट) पहुंचे गये। यहां पहुंचकर आपने उसी बाग में अपना आसन लगाया जो कि आपके पिताजी ने आपके पहले जन्म दिन पर स्मारक के रूप में बनवाया था। परन्तु जब से आप अपनी कुमाता के दोषारोपण द्वारा हाथ-पांव काटकर कुए में फेंक दिए गये थे तब से ही यह बाग सूखा हुआ पड़ा था। पहले जहां सैंकडों मनुष्य बाग में कार्य करते हुए नजर आते थे, आज वहां कोई भी पक्षी इधर-उधर नहीं दिख रहा था। सारे वृक्ष सुखकर रात के अन्धेरे में यमराज की भांति डरावने नजर आ रहे थे। कुछ वृक्ष सुखकर नष्ट भी हो गये थे।

जिन मनुष्यों ने पहले इस बाग की सुन्दरता को देखा था। अब वे ही मनुष्य उस बाग को देखकर अपनी आंखों में जल भर लाते थे।

बाग की यह दशा देखकर आपका मन भी बहुत विथित हुआ। अन्ततः कुछ ही देर बाद आप कुछ सावधान हुए। आपने गुरू मंत्र का स्मरण किया वर्षिकास्त्र

प्रयोग किया। या इस प्रकार कहा जाये कि संत चरण रज के स्पर्श से भूमि की उर्वरा शक्ति बढ गई। बाग हरा -भरा हो गया। नयी नयी कोपलें आ गयी। धीमी -2 वर्षा आरंभ हो गयी। ऐसा प्रतीत हो रहा था कि बाग के सभी पेड -पौधे झूमते दिख रहे थे। सारा बाग सुगन्ध से महकने लगा। ठंडी सुगन्धसनी पवन चलने लगी। तालाब में अनेक प्रकार के कमल खिल गये और मजुंल मधुकर पुंज गुंजारने लगे। हंस पिक (कोयल) शुक (तोते) के भांति -2 के शब्दों से वातावरण मोहक बन गया।इतना सब होने पर भी बाग के माली ने यह नहीं समझा कि अचानक बाग की काया पलट जाने का क्या कारण है? माली अचम्भित था कि वर्षा किस कारण से हो रही है। यह कैसे संभव हुआ? योगी को यह करने की क्या आवश्यकता थी। जो किसी के सूखे बाग को हरा कर दे। यदि ऐसा होता तो आज तक यहां पर कितने ही योगी आये और जितने दिन उनकी इच्छा हुई निवास करके चले गए। किसी भी योगी ने बाग की तरफ ध्यान नहीं दिया। किन्तु जब बाग दिनों दिन हरा-भरा होता गया तब माली से नहीं रूका गया, उसने इस विषय में महल के कुछ राजपुरूषों को अवगत कराया। उन्होंने पुष्पित-पल्लवित वृक्षों -लताओं से सुसज्जित बाग को आकर देखा। जिस बाग में पत्ते -पत्ते डालियां हर कुछ सूख कर झड़ गया था। उन्होंने पुष्पित पल्लवित वृक्षों

-लताओं से सुसज्जित बाग को आकर देखा। जिस बाग में पत्ते -2 डालिया हर कुछ सूखकर झड गया था। अचानक बाग को हरा -भरा देखकर सब के सब आश्चर्य चकित और ठगे से खड़े रह गये। क्योंकि आज यह बाग सूखा नहीं था। जो पहले सुनसान दशा में परिणित हो गया था। आज बाग में चारों और पक्षियों की चहचाहट थी। फलों और फूलों से बाग सुगन्धित हो रहा था।

सभी राजपुरूषों ने माली से इस आश्चर्यजनकि घटना का कारण पूछा।

माली ने कहा - दो सप्ताह पूर्व बाग में बहुत अच्छी वर्षा हुई थी। उसके पश्चात् जब मैं प्रात:काल सोकर उठता हूँ तो नित्यप्रति ही सूक्ष्म वर्षा हुई मिलती है। अत: मैं भी यह देखकर अत्यंत आश्चर्य चकित हूँ। राजपुरूष धूमते -2 योगी जी के आसन के समीप पहुंचे उनकी दृष्टि योगी जी के मुखरविन्द पर पड़ी। परंतु वह कुछ बोल नहीं सके। सबने योगीश्री को प्रणाम किया और उनके समीप ही बैठ गये। उनको वह सब एकटक निगाह टिकाये देखते रहे, सोचते रहे कि यह हमारा राजकुमार कृष्ण तो नहीं? किन्तु यह विचार भी बार -2 मन मे आ रहे थे कि राजकुमार के तो हाथ -पांव काटकार कुए में फेंक दिया था। इसलिए उसका जीवन तो मुश्किल है। किसी कारण से यदि बच भी गया तो इसके हाथ -पाव

कहां से आये। इसी सोच विचार में सब के सब अपने -2 घर लौट आये।

प्रातकाल होते ही वह सब महल में पहुंचे और राजा शालिवाहन को सब घटना कह सुनाई। सबके सब एक साथ ही कह उठे महाराज! बाग में एक योगी ठहरा हुआ है। वह एकदम अपने राजकुमार जैसा है। बाग की यह अवस्था जो राजकुमार के समय थी अर्थात् बाग की हरियाली भी उसी योगी के आगमन से लौट आई है। यह सुनकर राजा विस्मित हो उठे। और कहने लगे कि कल प्रातः काल मैं स्वयं जाकर बाग का निरीक्षण करना चाहता हूँ। ओर योगी के दर्शन भी करना चाहता हूँ।

रात्रि में राजा पुत्र मोह के अगाध समुद्र में गोते लगाने लगे। वह अनेक विचारों में डूब गये।सोचने लगे मैं पुत्र के प्राण हनन के पश्चात पूरे विश्व में कंलकित हो चुका हूँ। उस समय छोटी रानी की बातों में आकर मैं जानकर भी अनजान बन गया। वह सोच रहे थे - हाय पुत्र कृष्ण! इस दुष्टा के मोह में फंसकर मैने तुम्हारी एक भी बात नहीं सुनी, और बहुत बडा अन्याय कर डाला। पुत्र! यह दुष्टा ही तुम्हारे सौन्दर्य के सामने अपने कुल और राजवंश की कलंकिनी हुई। पुत्र! तुम्हारी सुन्दरता तुम्हारी असाधरणलावण्यता के उपर कोई भी मोहित हुए बिना नहीं रह सकता था।

आज राजा को अपने प्रिय पुत्र कृष्ण के अमृतमय वाक्यों का स्मरण हो आया। उनके हृदय में योगी दर्शन की उत्कण्ठा उत्पन्न हो गई। वह रात्रि उन्होंने बडी कठिनता के साथ व्यतीत की। अन्धकर ओर प्रकाश का सन्धिकाल समाप्त हुआ।

प्रातः काल होते ही राजा स्नानादि क्रियाओं से तथा नित्य कृत्य के पश्चात पूजा पाठ में प्रवृत्त हुए, तत्पश्चात् वह योगी के दर्शनों की तैयारी करने लगे।

राजा सहित मंत्रियों का बाग की ओर प्रस्थान

आकाश में बादल छाये हुए थे। हल्की वर्षा हो रही थी। वर्षा मे।ही राजा मंत्रियों सहित बाग में योगी दर्शन को चल पडे। बाग में पहुंचते ही राजा को यथार्थ उक्ति का प्रमाण मिल गया। महाराज शीघ्र ही योगी के निकट पहुंचे। कितने ही क्षण बीत गये राजा मौन बैठे रहे। और प्रतिमा की भांति निरन्तर योगी की ओर एकटक निगाह टिकाये बैठे रहे। लज्जा के कारण अत्यंत कठिनता से रोके हुए अश्रु निकल ही आये। आज राजा को पुत्र के अतिरिक्त और किसी भी सांसारिक वस्तु का ध्यान नहीं था।राजा की अन्तरात्मा लगातार यही कह रही थी कि यह तो मेरा पुत्र कृष्ण ही है। उसको छाती से लगाने के लिए वह अधीर हो रहे थे। उन्होंने कई बार अपने कदम आगे बढाये परन्तु किसी प्रकार अपने हृदय को रोक ही लिया। क्योंकि वह भी मंत्रियों की तरह यही सोच रहे थे कि कृष्ण के तो हाथ -पांव छिन्न कर दिये थे उनका पुनः पूर्ण होना कैसे संभव हुआ। यही कारण था कि अधिक देर तक अपनी खिन्न दशा का परिचय देकर भी किसी प्रकार अपने हृदय में धीरता धारण करते हुए प्राकृत विषय की ही वार्ता करने लगे। राजा ने योगी से कहा - हे महात्मा जी! मैं इस राज्य का अधीश्वर होकर

भी जितना दुखी हूँ उतना मैं नहीं समझता कि कोई अन्य पुरूष होगा।

यह सुनकर सिद्ध चौरंगीनाथ ने कहा -राजन्। मैं आपकी विचलित और व्यथित दशा देखकर इस अनुमान से तो परिचित हो गया था, कि आप किसी साधारण दुःख से दुःखी नहीं हैं। वैसा आपने कह भी दिया। राजन्! स्पष्ट कहिये कि किसने आपकी ऐसी स्थिति बना रखी है। वह कौन सा ऐसा कष्ट है जिसके कारण आप इतने दुखी हैं।

राजा ने कहा - हे योगी श्रेष्ठ! मेरा सबसे बडा दुख मेरा पुत्र है। मैं इस दुख से इतना दुखी नहीं, जितना की छोटी रानी के मिथ्या जटिल जाल में जकड़कर अपने पुत्र की हत्या करने से हूँ। उसकी बातों में आकर मैं इस कलंकित अनर्थ को कर बैठने में समर्थ हुआ। जिससे मेरा पुत्र सदा के लिए मेरी दृष्टि से अलग हो गया। मैंने ही छोटी रानी की बातों में आकर उसके हाथ पांव छिन्न करा दिये थे। क्योंकि उस समय मैं उसी के मोह में अन्धा हो रहा था।

यह सुनकर योगी श्रेष्ठ कहने लगे -महाराज! मैं यह जानना चाहता हूँ कि रानी ने अपने कथन की सत्यता के लिए आपको क्या प्रमाण दिखाया था तथा जो दिखाया था, वह सत्य भी था या नहीं?

राजा ने कहा - हे महात्मा जी! यह तो भगवान शिव ही जाने कि वह प्रमाण सत्य था या असत्य था। किंतु जब मैंने रानी से प्रमाण मांगा तो दासियों ने निसंकोच होकर कह दिया कि रानी का कथन सत्य है। मैंने कुछ दिन बाद दासियों से पुनः पूछा कि सत्य बतलाओ कि रानी ने जो कहा था वह सत्य था या नहीं। दासियां कहने लगी - महाराज! हम अपने प्राण दे सकती हैं किन्तु असत्य नहीं कहेंगी। इसी प्रकार मैंने उन सबकी बातों में आकर अनर्थ कर डाला।

योगी ने कहा - महाराज! क्या वह सब दासियां अभी तक जीवित हैं? राजा ने कहा -योगी श्रेष्ठ! वह सब अभी तक जीवित हैं।यदि आप कहे तो मैं उन्हें अभी बुला सकता हूँ।

सिद्ध चौरंगीनाथ जी ने राजा से कहा - राजन्! हम योगी हैं सांसारिक बन्धनों में नहीं पडते। फिर भी आप आग्रह कर रहे हैं तो रानियों सहित उन सबको बुला लीजिए। मैं उनसे कुछ परामर्श करके देख लूँ कि उनका कथन कहां तक सत्य था। यह सुनकर राजा ने अपने दूत से कहा कि वह अभी दोंनों रानियों सहित उन दासियों को बुला लाये। पुरानी बातों को पुनः उजागर हुआ देखकर रानी लूणादे का कलेजा फटने लगा। समस्त संसार उसे जलमय दिखने लगा। रानी होने के पश्चात् भी आज वह अपने आप को अकेली महसूस कर रही थी। राजा को

उससे अब कोई मोह नहीं रह गया था। फिर भी वह बाग में चलने को तैयार हो गई। बडी रानी के पास भी सूचना भेजी गई। लेकिन बडी रानी ने दूत से कहा - बाग में साधु महात्मा तो आते ही रहते हैं। मेरा वहां जाने का कोई प्रयोजन नहीं बनता। यथार्थ बात तो यह थी कि जिस दिन से पुत्र कृष्ण उसके आचल की छाया से अलग हुआ था। उसी दिन से वह छोटी रानी से घृणा करने लगी थी। रानी इन्छरादे ने मन में विचार किया कि यदि वह बाग में गई तो फिर से छोटी रानी के समीप ही बैठना पड़ेगा। उन्होंने सन्देशवाहक को समझाया कि मेरी तरफ से योगी श्रेष्ठ से क्षमा मांगना और कहना कि मुझे न तो दिखाई देता है और न ही कुछ सुनाई देता है। ऐसी दशा में मैं वहां जाकर क्या करूंगी। उनकी प्रार्थना दूत ने योगी और राजा को कह सुनाई। उनकी बात सुनकर योगी चौरंगीनाथ जी कहने लगे राजन्। बड़ी रानी को तो अवश्य आना पड़ेगा। यदि कम दिखने और सुनने की बात है तो मैं उनके लिए यह भस्मी दे रहा हूँ। उनको जाकर दे दो और कहो कि कुछ को आंखों मे और कुछ को कानों में लगा ले।

सन्देशवाहक तुरंत भस्मी लेकर रनिवास में पहुंचा। रानी को भस्मी देकर वह कहने लगा कि, यह भस्मी योगी ने आपके लिए भेजी है आप इसे आँखों में और कानों में लगा लीजिए।

रानी ने भगवान को धन्यवाद किया और विभूति ग्रहण की। विभूति के लगते ही अन्धकारमय जगत उन्हें प्रकाशमय दिखाई देने लगा। यह देख रानी अत्यंत प्रसन्न हुई और वह बाग में चलने को तैयार हो गई। बाग में पहुंचते ही उन्होंने योगी के दर्शन करने चाहे, किन्तु योगी के कथनानुसार दोंनो रानियों को पहले अलग रखा गया।

उसी समय योगी जी ने एक ऐसे मन्त्र का अनुष्ठान किया जिससे छोटी रानी और दासियों के शरीर में कुछ कम्पना आरंभ हो गई। यह देखकर उनके होश ठिकाने आ गये। ऐसी अवस्था में योगी ने दोनों माताओं से कहा– हे माताओं! अब तक जो बीत चुका है उसका स्मरण न करके सत्य –2 बताने का कष्ट करे। मिथ्या कहने से आप नरक की अधिकारिणी भी हो जायेगी। इसके विपरीत यह भी मत समझना कि आपका गूढ रहस्य अभी तक किसी ने भी नहीं जाना है। गुरू कृपा से हमने ऐसी सिद्धियां प्राप्त की है जिसके द्वारा मनुष्य का शुभ अशुभ कृत्य सहज ही जाना जा सकता है। अतः हमने आपके वास्तविक तत्व को स्वयं तो समझ ही लिया है। परन्तु हम राजा के समक्ष आपके ही मुख से उसको प्रकट करवाना चाहते हैं।

रानी लूणादे और दासियों द्वारा राजा के समक्ष अपराध स्वीकारना

लूणादे जो कभी अपने रूप और यौवन को लेकर इतनी अंहकारी थी कि उसने राजा को भी उसके पुत्र के विरूद्ध भड़का दिया। क्योंकि वह जानती थी कि राजा उसके रूप के आगे किसी को भी महत्व नहीं देता। उसी ने राजकुमार के विरूद्ध राजा को भड़काया कि इसने मेरे ऊपर कुदृष्टि डाली है। इसने मेरा शीलभंग करने की चेष्टा की है। राजा ने क्रुद्ध होकर और रानी की बातों में आकर अपने पुत्र के हाथ -पांव काटवाकर कुएं में फेंक दिया। आज वही रानी लूणादे योगी के और राजा के सामने फफक -2 कर रो रही थी। और क्षमा याचना कर रही थी कि हे राजन्! निःसन्देह सारा अपराध मेरा ही था। मैंने ही इस घिनौने जाल की रचना की थी। अपना कृष्ण तो अद्वितीय मातृ भक्त था। मेरे लाख छल करने पर भी उसने मुझे माता के अतिरिक्त कुछ भी कहना स्वीकार नहीं किया।

इसी प्रकार दासियां भी कहने लगी कि कुमार ने तो माता -2 कहकर रानी के चरणों में अपना सिर भी रख दिया। यह देखकर हमारा हृदय भी भर आया परन्तु रानी टस से मस नहीं हुई। यह सुनते ही राजा का चेहरा

और आंखे क्रोध से लाल हो गई और वह खड़े होकर छोटी रानी की तरफ तलवार लेकर दौड़े। योगी ने बड़ी तत्परता से राजा को आसन पर बैठाया। राजा के क्रोध से रानी और दासियों का रंग डर से पीला पड़ गया कि अब तो हमारे प्राण बचना कठिन है।

योगीराज ने राजा से कहा -राजन्! आप जो कुछ भी करेंगे हमारी आज्ञा के अनुकूल ही करेंगे। इसलिए हे राजन्। आप इन पर क्रोध न करें। इनका कोई अपराध नहीं है। आपके पुत्र कृष्ण के भाग्य में यही कुछ लिखा था। राजन्! भाग्य का लिखा कोई नहीं मिटा सकता। विधि के विधान के अनुसार ही उसने ऐसी कठिन आपत्ति का सामना किया। राजन् जो होना था वह तो हो ही चुका है। उस विषय में प्रायश्चित करने की कोई आवश्यकता नहीं है, किन्तु यह स्मरण रखना कि सच्चे मनुष्य का कभी अनिष्ट नहीं होता। उसका सदैव ईश्वर सहायक होता है। हे राजन! इस बात का प्रमाण तो भारत वर्ष में अनेकों बार देखने को मिला है। जैसे - भक्त प्रह्लाद को उसके पिता ने कितने ही कष्ट दिये। किंतु भगवान उसके साथ थे। मीरा बाईं, मोरध्वज और भी न जाने कितने ही ऐसे उदाहरण मिल जाऐंगे।

अब आप मुझे ही देखिए आज मैं वही आपका पुत्र कृष्ण आपके समक्ष बैठा हूँ। आपने भी मेरे हाथ -पांव छिन्न करा दिए थे और मुझे कुये में फेंक दिया था।

परन्तु मैं अपनी सच्चाई और अपने धर्म पर था। इसलिए मेरा कुछ नहीं बिगड़ा। और आपका कोई भी प्रयत्न सफल नहीं हुआ। मैं करूणावतार गोरक्षनाथ जी की कृपा से फिर वैसा ही पूर्णांग हो गया हूँ। बल्कि वैसा ही नहीं मैं अब उस स्तर तक पहुंच चुका हूँ। जहां से मुझे फिर कभी दुख अनुभव नहीं होगा।

राजा ने आपकी बात को यहीं तक सुना और आसन से उठकर आपको छाती से लगा लिया। राजा को ऐसा करते देख रानी से भी नहीं रहा गया। वह भी लज्जा का स्मरण करते हुए राजा से वंचित रहे अपने जिगर के टुकडे को छाती से लगा लिया और वात्सल्य में निमग्न हो मूर्च्छा से राजा के समक्ष ही अचेत हो गई।

राजा शालिवाहन अपने मुख से कुछ भी न कहते हुए केवल प्रेमाश्रुओं से अपने वस्त्र एवं श्री नाथ जी के शरीर को प्लावित करते रहे थे। आज वह संसार सागर को आनंद सागर समझ कर उसमें डुबकी लगा रहे थे। वह मन ही मन विचार कर रहे थे कि हे ईश्वर! अब कभी भी मेरे पुत्र को मुझसे अलग मत करना।

उस समय जनता भी अपने आप को नहीं रोक पा रही थी। वृक्षों का भी यही हाल था। वे सूक्ष्म वर्षा के कारण पत्तों से बिन्दु छोड़ते हुए ऐसे प्रतीत हो रहे थे, मानों स्वयं भी प्रेमाश्रुपात कर जनता का अनुकरण कर रहे हो। पक्षी भी उड़कर इस भाव को प्रकट कर रहे थे

मानों वे इसे देख ही न पा रहे हो। यही कारण था कि बाग में चूँ तक का भी शब्द नहीं था। राजकीय मर्यादा से मौन धारण किए हुए प्रजाजन अश्रुपात कर राजा का अनुकरण कर रहे थे। दृश्य बड़ा ही विचित्र एवं हृदय विदारक था। लगभग दो घड़ी पर्यन्त महाराजा शालिवाहन उसी अचेत अवस्था में रहे। उसके पश्चात् रानी से उन्होंने कुछ कहा। रानी सचेत हुई और वह अब पुत्र कृष्ण से कुछ कहना चाहती थी। परन्तु लज्जावश प्रयत्न करने पर भी उनके मुख से कोई शब्द नहीं निकल रहे थे।

चौरंगीनाथ द्वारा अपनी पूज्य माँ इन्छरादे को ज्ञानोपदेश देना

सिद्ध योगी चौरंगीनाथ जी ने अपनी सौतेली माता लूणादे से उनके ही मुख से सब कुछ सुनने के पश्चात् और उनका अपने ही मुख से अपना अपराध स्वीकार के पश्चात् वह अपनी पूज्य माताजी को समझाने लगे। कहने लगे -मां! आपको मेरे पीछे से मेरे लिए इतना शोक नहीं करना चाहिए था। जिससे आपका शरीर ही नहीं बल्कि आपके नेत्र भी अपना कार्य करने की दशा में नहीं रहे। आपको जीवित अवस्था में ही मृतक के समान समय व्यतीत करना पड़ा।

योगी श्री ने अपनी मां को कहा - मां आपको यह भली-भांति ज्ञात है कि मैं रघुकुल भूषण श्री रामचन्द्र जी के हस्त स्थापित श्री रामेश्वरम् भगवान के प्रसाद से आपको प्राप्त हुआ था। तब तो आपको निःसंकोच होकर यह सोचना चाहिए था कि न तो आपका पुत्र ऐसे कुत्सित कृत्य में प्रवृत्त हो सकता है। और न ही ऐसी आपत्तियां उसका बाल भी बाकां कर सकती हैं। यह सुन माताजी ने करूण-स्वर से किसी प्रकार शब्दोचारण कर कहा -पुत्र! तू जानता है परमात्मा ने स्त्री को ममतामयी बनाया है और मृदु हृदयवाली बनाया है। यही कारण है

कि मैं सब कुछ जानती हुई भी उस दुर्दशा से ग्रस्त हुए बिना नहीं रह सकी।

योगी श्री ने माँ से कहा - माँ! जब तक भगवान का हाथ सिर पर होता है तब तक उसका कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकता। अब आपको मेरे विषय में चिंता करने की आवश्यकता नहीं है।

अपनी मां को सान्त्वना देने के पश्चात् चौरंगीनाथ जी नें अपनी विमाता और दासियों को भी अपने समीप बुलाया। उनके दुःखी हृदय को आपने शांत किया। उसके पश्चात् अन्य राजपुरूप भी अपने -2 प्रेम की पराकाष्ठा दिखलाते हुए आपको सत्कृत करने लगे। राजा शालिवाहन ने प्रजा के समक्ष कहा- हे समस्त प्रजाजनों! आपके राजकुमार अब आपके समाने हैं। आज से ही आप मेरी आशा छोड़कर राजकुमार को अपना राजा स्वीकार कीजिए। मैंने छोटी रानी की बातों में आकर राजकुमार के साथ बहुत बडा अनर्थ किया था। इसलिए अब इसके आने के पश्चात् मैं इसे ही राजपाठ सौंप रहा हूँ। मैं अब ईश्वर भक्ति करना चाहता हूँ। जिससे राजकुमार के साथ किए गए अनर्थ के कलंक को धो सकूँ। राजा की सभी बातें प्रजाजन चुप्पी साधे सुन रहे थे।

सिद्ध योगी कहने लगे - राजन्! यद्यपि आप अज्ञानता के कारण अनर्थ कर बैठे। और अब आप प्रायश्चित भी करना चाहते हैं। और अब आप दूसरा

अनर्थ करना चाहते हैं। मुझे राजपाठ सौंपकर। उस अनर्थ से यह अनर्थ किसी भी प्रकार कम नहीं है। यह तो उससे भी अधिक अनर्थकारी है। उस अनर्थ से तो मैं इस पद तक पहुंच गया हूँ कि मैं चाहूँ तो आपको उस कार्य से ही मुक्त नहीं कर दूँ बल्कि भारत वर्ष में आपको एक यशस्वी पुरूष की तरह प्रसिद्ध भी करवा दूँ। आप अब दुबारा ऐसे शब्द मुंह से न निकाले कि मैं राज्य का भार ग्रहण कर लूँ।

राजा कहने लगे - पुत्र! मुझे क्षमा कर दो। ऐसा कहकर मैंने अपनी भूल प्रदिर्शित की है। परन्तु तुम्हारी मां ओर मैं तुम्हारे वियोग में अब नहीं रह सकते। अतः अब हम भी तुम्हारे साथ ही चलना चाहते हैं। प्रजा से मेरा अनुरोध है कि वे मिलकर शासन चलाये। अब राज्य से हमारा कोई सम्बन्ध नहीं है। चौरंगीनाथ जी ने अपनी विमाता और पिता को वचन दिया कि आपको राज्य के लिए कुछ ही समय उपरान्त एक राजकुमार मिल जाएगा। आप अल्प समय में ही पुत्रवान बन जाऐंगे। किंतु जिस प्रकार मेरी मां ने पुत्र वियोग का दुख सहा है। वैसे लूणादे को भी सहना होगा। इस पुत्र के पश्चात् तुम्हारा वंश खत्म हो जाऐगा।

एक वर्ष के भीतर ही लूणादे ने पुत्र को जन्म दिया। उत्तराधिकारी के आने से प्रजा में खुशियां छा गई। रानी के ईर्ष्यालु होने से उसके पुत्र का नाम भी ईर्ष्यालु

ही रखा गया। किन्तु राजा बनने के पश्चात् वह रिसालू नाम से प्रसिद्ध हुए। राजा रिसालू से सम्बन्धित अनेक पुस्तकें पाकिस्तान में उपलब्ध हैं। कहते हैं राजा बनने के कुछ समय पश्चात् राजा रिसालू भी नाथ सम्प्रदाय मे ही दीक्षित हुए।

हिमालय में चन्द्रभागा तट पर तपस्या

सिद्ध चौरंगीनाथ जी महाराज राजा शालिवाहन के आदर सत्कार से प्रसन्न होकर, अपनी पूज्य मां के दर्शन करके और छोटी माता लूणादे को भी पुत्र प्राप्ति का आशीर्वाद देकर हिमालय की गुफाओं की ओर मार्ग में योग प्रचार करते -2 अग्रसर हो रहे थे। जब आप आगे बढते हुए जा रहे थे तो मार्ग में आपको अनेक ऐसे स्थल मिले जो एक से बढ़कर एक रमणीय थे। ऊंची -2 पर्वत मालायें बर्फ की सफेद चादर ओढ़े हुए थी। घाटियां भी हरी -2 घास की चादर ओढ़े थी। ऐसा प्रतीत हो रहा था मानों प्रकृति का समस्त सौन्दर्य यही इकट्ठा हो गया हो। आप वहां ऐसे स्थान पर विराजमान हुए, जहां पर अनेक गुफाये आपके सम्मुख थी। उन्हीं में से आप एक गुफा की ओर अग्रसर हुए। आपको वहां आया देखकर वृक्षों पर बैठे हुए पक्षियों ने आपके आने पर अपने स्थान की विजय समझी। वह सब मिलकर चूँ-चूँ करते हुए अपने मधुर स्वर में आपका स्वागत करने लगे।

अरण्य जन्तुओं ने आपका शुभागमन देखकर कन्दरा से बाहर आकर आपके लिए सुविधा उपस्थित की। सिंह ने यह सोचकर कि मेरी गर्जना से योगी जी को ध्यान करने में बाधा न हो, वह गुफा से बाहर चला गया। भालू ने भी यही सोचा, और अपने आप बाहर चला

गया। सूकरों ने यह विचार किया कि महात्मा जी को स्वच्छ जल की उपलब्धि होती रहे, कन्दरा से बाहर प्रस्थान किया। केवल मृग आदि जन्तु आपके पास ही रहे। कन्दरा से सबके प्रस्थान करने के पश्चात आपने अन्दर प्रस्थान किया। मृगो का कभी मनुष्य के साथ सहचर न होने पर भी आज ये निसंकोच होकर आपके साथ क्रीड़ा कर रहे थे। प्रकाशमयी रात्रि में जब ये आपके साथ बैठते थे, आप मध्य में विराजित श्री कृष्ण की शोभा धारण करते प्रतीत होते थे। उनके छोटे -2 बच्चे खेलते -2 आपके आसन के ऊपर तक चढ जाते थे। आप उनकी क्रीड़ा में बाधा नहीं डालते थे। यही कारण था कि उनके साथ आपकी अधिक प्रीति हो गई थी। नन्हे -2 बच्चे कभी -आपकी भुजा चाटते तो कभी आपके घुटने चाटने लगते थे। उनका लाड़ प्यार देखकर आप उनको प्रतिदिन कन्दमूल फल देते थे। इस प्रकार पर्वतीय कुटुम्ब के बीच में बैठे हुए आप अपने को देवराज इन्द्र से भी अधिक सुखी समझ रहे थे। आपने इन अरण्य जन्तुओं का सुख अधिक दिन अनुभव करना उचित नहीं समझा। आप फलाहार से पवनाहार में प्रयत्न करने लगे। कुछ दिन में आपका दृढ अभ्यास हो जाने से आपने एक छोटी गुफा तपस्या के लिए तैयार कर ली। जिसमें आप साप्ताहिक समाधि के क्रम से समाधिनिष्ठ हुए। इस कृत्य में आपके चौबीस वर्ष बडे ही आनंद से

निकले। फिर आपने वन में उपस्थित सभी जीव जन्तुओं का एवं अपने गुरूदेव का धन्यवाद किया और आगे की और प्रस्थान किया। मार्ग में दुर्गम पहाड, जंगल, नदियों को पार करते -2 आप हिमाचल प्रदेश ज्वाला माँ के मन्दिर में पहुंचे।

माँ ज्वाला जी का आशीर्वाद प्राप्त करना और नव रात्र मेले में रोगियों को रोग मुक्त करना

ज्वाला जी मन्दिर के चारों और उस समय बहुत घनी हरियाली थी। मन्दिर चारों और से पर्वत मालाओं से घिरा था। आपने निकट ही उचित स्थान देखकर अपना आसन लगा लिया। अनुकूल अवसर देखकर आप ज्वाला मां के दर्शन करने मन्दिर में पहुंचे। वहां पहुंचकर सर्वप्रथम आपने ज्वाला माई की विधिपूर्वक स्तुति की। मां ज्वाला की स्तुति में आप कहने लगे - हे मां! हे जगदम्बा! हे समस्त सृष्टि की आधार! आप समस्त भक्तों और साधकों की उसी प्रकार रक्षा करती है जिस प्रकार मां अपने अबोध बालक की रक्षा और लालन पालन करती है। हे मातृ स्वरूपा आध्यात्मिक देवी। आपका भी ऐसा ही स्वरूप है। हे मां! आपको मेरा शत् -2 प्रणाम है।

इस प्रकार चौरंगीनाथ जी की स्तुति से मां ज्वाला जी साक्षात् प्रकट हो गई। सर्वप्रथम माता ने चौरंगीनाथ जी के शीश पर अपना वरद हस्त रखा और परिचय पूछा सारा वृतान्त सुनने के पश्चात् मां ज्वाला जी ने आपको पुत्र की भांति अपनी गोद में बैठा लिया। और वात्सल्य

की वरसा कितनी देर करती रही। माता कहने लगी पुत्र मेरी प्रसन्नता निष्फल न हो इसलिए मैं तुम्हें वरदान देती हूँ कि तुम भारत में देवता के नाम से भूषित होगे। मां से वरदान पाकर आप अति प्रसन्न हुए। वरदान पाकर और उस पर पुलकित होते हुए आपने मां के श्री चरणों में प्रणाम किया और अपने आसन पर 'जाने की आज्ञा मांगी।

ज्वालामाई ने कहा पुत्र! अभी मत जाओ। कुछ दिन और यही ठहरो। क्योंकि नवरात्र के कुछ ही दिन शेष हैं। नवरात्र में महादेव जी भी यहां पधारेंगे। उसमें तुमको महादेव जी की आज्ञा पालन करने का भी उचित अवसर प्राप्त होगा। तब तक यहां अन्य योगी भी पहुंच जाऐंगे।

योगी चौरंगीनाथ जी ने मां ज्वाला जी की आज्ञा शिरोधार्य करते हुए अपने आसन की ओर प्रस्थान किया। और प्रतिदिन मां का अर्चना करते रहे।

नवरात्र मेले का दिन समीप आया जानकर श्रद्धालुजन एकत्रित होने लगे। देखते ही देखते असंख्य नर नारियों का समूह उपस्थित हो गया। वहां पर उपस्थित योगियों से आपने कहा - हे महानुभावो! जिनको सुदूर स्थानों पर पहुंचना है उसका केवल यहां बैठे रहने से कार्य सिद्ध, नहीं हो सकता। आप सब यह तो भली - भांति जानते ही है कि हम सबको ही मिलकर तो लोंगो को ज्ञान की ओर अग्रसर करना है। मेले में उपस्थित रोगी लोंगो को भी अपनी और आकर्षित करना

है और उन्हें औषधि प्रदान करनी है। अत: मैं यह चाहता हूँ कि आप लोग भी अपनी -2 सहमति प्रकट करें, कि इस कार्य में उत्तीर्ण होने के लिए किस उपाय का अवलम्बन करना उचित है।

सब योगियों ने मिलकर उत्तर दिया -हे योगी श्रेष्ठ! यह आपकी ही इच्छा पर निर्भर है। हमें तो अपना आगमन सफल करने के लिए केवल यही देखना है कि इस जन समुदाय में जन्ममरणात्मक अत्यंत प्रबल रोग से कौन विमुक्त होने की अभिलाषा से हमारा आश्रय ग्रहण करता है।

यह सुनकर योगीजी ने मेले में चारों और यह घोषणा करा दी कि, जो भी कोढ़ी, लगड़ा, अन्धा या फिर किसी भी शारीरिक बीमारी से पीड़ित व्यक्ति हमारे पास आयेगा हम उसे आज ही दुख से रहित कर देगें।

योगी से रोगमुक्त होने की घोषणा सुनकर सहस्त्रों रोगी आपको आसन की ओर दौड़ पड़े। आपके आसन के चारों और भीड़ जमा हो गई। आपने अपना कार्य आरंभ किया, जो -2 मनुष्य अपनी व्याधि लेकर आपके पास आया, आपने गुरूमंत्र संशोधित विभूति के प्रभाव से उसे उसी समय मुक्त कर दिया।

यह देख लोंगो पर आपका बड़ा प्रभाव पड़ा। परिणाम यह हुआ कि जनता आपके दर्शन करने को

अधीर हो उठी। जनता आपकी ही नहीं किन्तु आपके पूज्यपाद गुरू जी की भी प्रशंसा कर रही थी। इसी अवसर पर आपने लोगों को सम्बोधित किया और कहा - हे भक्तों! यह तो सत्य है और आप सब लोगों को ज्ञात भी है कि यदि संसार में कोई रोग न होता तो औषधियों तथा वैद्य लोगों की कोई आवश्यकता ही नहीं होती। परन्तु ऐसा नहीं है। जहां भी देखों वहीं त्रिविध रोग का साम्राज्य है। परन्तु उस भगवान के चरणों में प्रणाम है कि जितने भी रोग है उन्होंने उतनी ही औषधि भी रच डालीं। भक्तों! यह भी स्मरण रहे कि छोटे -2 रोगों के लिए आप योगियों के पास न भागे। योगी तो योगात्मक औषधि देने वाले हैं। संसार में रोगों का अंत नहीं है। बल्कि इनको शांत करोगे तो करने और कराने वाले दोनो ही शांत हो जायेगे। अत: जिसके निवारण करने पर किसी अन्य रोग का मुख न देखना पड़े। ऐसे जन्म मरण रोग की योगात्मक औषधि ग्रहण करने की यदि किसी महानुभाव की श्रद्धा हो तो वह हम लोगों के पास आ जाये। अधिक दूर जाने की आवश्यकता नहीं। अब आप मुझे ही देख लीजिये। मैं वही मुनष्य हूँ, जो राजा शालिवाहन के द्वारा हस्त पैरों के रहित करके कूप में फेंक दिया गया था। मैं ऐसी दिशा में सजीव रहने पर पूज्य पाद गुरूदेव की कृपा से न केवल हाथ -पांव वाला बन गया हूँ, बल्कि उस स्तर तक पहुंच चुका हूँ कि

आज आप लोगों के देखते -2 कितने ही लोगों को उनके दुखों से विमुक्त कर सका हूँ। ऐसा क्यों और कैसे हुआ? यह सब योग रूपी औषधि की ही महिमा है।

प्रवचन पूरा होने पर उपस्थित श्रद्धालुओं ने आपके चरणों में पुष्पांजली अर्पित कर प्रणाम किया आपकी जय -जयकार करने लगे। उसके पश्चात् आपने आदिनाथ भगवान शंकर से आशीर्वाद प्राप्त किया और मां ज्वाला के चरणों में शीश नवाकर आप नीचे मैदानी प्रांतों में योग प्रचार के लिए चल पड़े।

चौरंगी खाल में तपस्या

योग प्रचार करते -2 सिद्ध योगी उत्तरकाशी में कुछ समय विश्राम के लिए ठहर गये। और लोगों को योग मार्ग की और प्रेरित करने लगे। कई वर्षो तक आपने वहां तपस्या भी की। उत्तरकाशी के समीप ही एक छोटी सी जगह है जहां पर आपने तपस्या की थी, वही स्थान चौरंगी खाल के नाम से प्रसिद्ध हो गया।

जैसे माह - चौदस को अस्थल बोहर में मेला लगता है सिद्ध चौरंगीनाथ जी का, उसी दिन चौरंगी खाल में भी बड़ा भारी मेला लगता है। सहस्रों श्रद्धालु मन्दिर में शीश झुकाकर आपका आशीर्वाद लेते हैं। और आप उनकी मनोकामना पूर्ण करते हैं।

सांगलद्वीप की राजकुमारी श्यामवती की प्रयाग कुंभ मेले में गोरक्षनाथ जी से व चौरंगीनाथ जी से तांत्रिक लड़ाई लड़ना

गुरू गोरक्षनाथ जी का अपने शिष्य चौरंगी से बहुत घना अनुराग था। वह अपने शिष्य को हर तरह से पारंगत करना चाहते थे। इसलिए उन्होंने अपने शिष्य को तंत्र -मंत्र व सभी सुक्ष्म विद्यायें सिखा दी थी।

एक दिन चौरंगीनाथ जी के गुरूभाई लक्कड़नाथ ने कहा कि गुरू आज्ञा लेकर इस बार प्रयाग कुंभ पर्व पर स्नान करने चलेंगे। चौरंगीनाथ जी ने गुरूजी से आज्ञा ली, कि हमें प्रयाग स्नान के लिए जाना है। गुरूजी ने उन्हें समझाया कि मार्ग में और प्रयागराज में जाकर जादू -टोने करने वालों से अपने साथियों की रक्षा करना। और यदि तुम भी किसी भंयकर मुश्किल में फंस जाओ तो मेरा स्मरण कर लेना मैं तुम्हारी सहायता यहीं से मंत्र शक्ति से करूंगा।

गुरू का आशीर्वाद लेकर चौरंगीनाथ जी अपने साथियों के साथ प्रयागराज जा पहुंचे। कुंभ पर्व पर राजा, रंक, साधु सन्यासी और अनेक श्रद्धालु लोग स्नान के लिए आते हैं। सांगलद्वीप की राजकुमारी भी अपनी सखियों के साथ कुंभस्नान के लिए वहां आ पहुंची।

श्यामवती ने जैसे ही पूरण की छवि देखी तो वह वहीं अपनी सुध खो बैठी। वह सोचने लगी यदि यह मेरा पति बन जाये तो मैं इसके ऊपर अपने प्राण भी न्यौछावर कर दूँ। वह जादू टोने की बहुत बड़ी जानकर थी। सबसे पहले तो बातचीत के द्वारा उसने पूरण को जानना चाहा। जब वह इसमें सफल नहीं हुई तो जादू के द्वारा पूरणनाथ को तोता बनाकर पिंजरे में कैद कर लिया। पूरणनाथ जी भी कुछ कम नहीं थे। दोनों में बहुत देर तक जादुई भिडन्त होती रही। अंत में पूरन ने उसे बेहोश कर दिया।

राजकुमारी की सखियां डर गई और वह वहां से दौड़कर गुरू सुरेन्द्रनाथ के पास गई। और उसे बचाने की प्रार्थना करने लगीं। सुरेन्द्रनाथ जी ने आते ही पूछा कि तुम्हारी ऐसी दशा किसने की। राजकुमारी ने साफ - कहा कि गुरूदेव। मेरी ऐसी दशा करने वाला और कोई नहीं बल्कि पूरणनाथ है। सुरेन्द्रनाथ जी पूरण के तेजस्वी चेहरे को देखकर चकित हो जाते हैं। वह राजकुमारी को समझाते हैं कि पूरण से प्रीत मत लगा। यह साधारण योगी नहीं है। न ही विषय भोगी है। परन्तु वह नहीं मानी। अन्त में सुरेन्द्र नाथ जी उसे भस्म देते हैं। और कहते हैं कि इसे पूरन पर डाल देना। राजकुमारी ने भस्मी पूरन पर डाली और उसे मोती की माला बना दिया। सुरेन्द्रनाथ तुंरत ही वह माला राजकुमारी को धारण करवा देते हैं और कहते है कि चालीस दिन तक इस

माला को नहीं उतारना। चालीस दिन बाद मोती बने पूरन की शक्ति क्षीण होने पर फिर उसे मनुष्य बना देने का वचन देते हैं। ओर उसे शीघ्र ही सांगलद्वीप भेज देते हैं।

इधर पूरणनाथ को अचानक से गायब देख उनके सभी साथी घबरा जाते हैं। औघड़नाथ ने गुरू गोरक्षनाथ के पास जाकर सारा वृत्तान्त सुनाया। सुनते ही गोरक्षनाथ जी चलने के लिए तैयार हो गये। सबको धीरज बंधाया। वहां पहुंचकर आसन लगाया और ध्यान लगाकर देखा कि सुरेन्द्रनाथ की शिष्या श्यामवती पूरण से विवाह करना चाहती है इसलिए ऐसी चाल खेली गई हैं। वह चेलों सहित सांगलद्वीप जाते हैं। मंत्रों से राजमहल का तापमान बढा देते हैं। गर्मी से बेहाल होकर राजकुमारी गुरू गोरक्षनाथ के चरणों में आती है गुरूजी उससे प्रयागराज से लाई हुई माला के विषय में कहते हैं।

राजकुमारी ने क्रोधित होकर कहा -हे योगी! क्या हम चोर हैं ? अगर मुझ पर मिथ्या आरोप लगाया तो इसी समय तुम्हे खत्म करा दूँगी। अगर तुम इतने सिद्ध हो तो क्यों नहीं अपनी शक्ति से उसे प्राप्त कर लेते। यहां वहां क्यों ढूँढ रहे हो।

इतना सुनते ही गुरू गोरक्षनाथ ने ऐसा मंत्र चलाया कि रानी के होश ठिकाने आ गये। मंत्रों के प्रताप से राजकुमारी के गले की माला टूट गई। उसके टूटते ही पूरण गुरूजी के समक्ष प्रकट हो गये। वहीं सुरेन्द्रनाथ भी

आं गये गुरू गोरक्षनाथ को आया देख वह उनसे गले मिले। एक दूसरे की कुशल क्षेम पूछी। तभी पूरणनाथ न सारा वृत्तान्त सुना दिया। गुरू गोरक्षनाथ जी के सामने सुरेन्द्रनाथ न अपनी भूल स्वीकार की और उनसे क्षमा मांगी।

नवनाथ कथा

जैसा कि नाथ सम्प्रदाय के अनुसार ज्योतिस्वरूप ॐकार महेश्वर आदिनाथ जी हैं। धरणी स्वरूपा मां पार्वती उदयनाथ जी हैं। जलस्वरूपा ब्रह्मा सत्यनाथ जी हैं। तेज स्वरूप विष्णुजी सन्तोषनाथ जी हैं। वायुस्वरूप शेषनाथ जी अचलनाथ जी हैं। आकाश स्वरूप गणेश गजकन्थडनाथ जी हैं। वनस्पति स्वरूप चन्द्रमा चौरंगीनाथ जी हैं। माया स्वरूप करूणामय मत्स्येन्द्रनाथ जी हैं। अलक्ष्य स्वरूप अयोनिशंकर त्रिनेत्र गोरक्षनाथ है। इस प्रकार यह नवनाथों के स्वरूप सिद्व योगियों ने कहें हैं।

प्राचीन समय की बात है। एक बार नवनाथ मण्डली भ्रमण करते -2 धर्मात्मा विदेह राज निमि की राज्यसभा में जा पहुंची। नवनाथों में यह सामर्थ्य थी कि जहां भी वह विचरते थे उनकी गति को रोकने वाला कोई नहीं था। नवनाथ अपनी इच्छानुसार ब्रह्माण्ड में भ्रमण करते रहते थे।

राजा निमि साधुओं के परम भक्त थे उनकी सभा में उनेक सिद्ध योगी, देव, ऋषि मुनि, साधुजन नित्य प्रति आते रहते थे। नवनाथ मण्डली को आया देख समस्त सभासद उनके सत्कार के लिए उठ खड़े हुए। सबको आदेश नमस्कार के पश्चात उनको आसन दिया गया। राजा निमि ने सबको ईश्वर स्वरूप समझकार बड़े आदर सत्कार

श्री नवनाथ स्वरूप दर्शन

सत नमो आदेश । गरू जी को आदेश । ॐ गुय जी । ॐकार आदिनाथ (ॐकार) ज्योति स्वरूप बोलिये । उदयनाथ पार्वती (धर्ती) स्वरूप बोलिये । सत्यनाथ ब्रह्माजी (जल) स्वरूप बोलिये । सन्तोषनाथ विष्णुजी (खड्ग खाण्ड तेज) स्वरूप बोलिये। अचल-अचम्भेनाथ शेष (वायु) स्वरूप बोलिये। गजबेलि गज कंथड़नाथ गणेशजी (गजहस्ती) स्वरूप बोलिये। ज्ञान पारखी सिद्ध चौरंगीनाथ चन्द्रमा (अठारह भार बनस्पति) स्वरूप बोलिये । माया स्वरूपी दादा मत्स्येन्द्रनाथ मत्स्य (माया) स्वरूप बोलिये । घटे पिण्ड नव निरन्तरे रक्षा करे श्री शम्भुजती गुरू गोरक्षनाथ शिव (बाल) स्वरूप बोलिये ।

नवनाथ मण्डली

पूर्वक उनकी पूजा अर्चना की, ओर बड़ी नम्रता पूर्वक राजा ने प्रश्न किया। हे नवनाथों! आप जगत कल्याण के लिए ही भ्रमण करते रहते हैं हे परम योगेश्वरो! इस संसार में ऐसा कौन सा उपाय है जो प्राणी मात्र का कल्याण कर सके?

राजा निमि के प्रश्न को सुनकर नवनाथ अत्यंत प्रसन्न हुए। सर्वप्रथम ॐ कार स्वरूप आदिनाथ भगवान शंकर बोले - राजन्! इस जगत में भगवन का नाम ही ऐसा है। जिसका कभी नाश नहीं होता और यही सम्पूर्ण भय से रहित कल्याण का साधन है। इस उपासना से देह के अभिमान में डूबे हुए पुरूष की सब भय बाधायें दूर हो जाती हैं। हे विदेह राज! मनु याज्ञवल्क्य आदि ने वर्णाश्रम आदि के धर्म आत्मज्ञान प्राप्ति के लिए जो कहे हैं वहीं भगवत् धर्म है। हे राजन् भगवत् भक्त अविद्या से कभी भयभीत नहीं होते। उसके तो सब विध्न स्वयं ही नष्ट हो जाते हैं। राजन्! भय भगवान की माया से होता है। इसलिए भगवान को ही परम गुरू मानना चाहिए। अपने गुरू से सदैव भगवद् बुद्धि से बर्ताव करना चाहिए। माया को दूर करने के लिए भगवान की उपासना करनी चाहिए। यदि मन का वशीकरण करना कठिन हो तो प्रभु स्मरण ही करना चाहिए। जिसका मन भगवन में लग जाता है वह कभी तो नाचता हे कभी गाता है, कभी हंसता है कभी रोता है कभी स्तुति करता है, कभी

भ्रमण करता है। कभी चिल्लाता है कभी हर्षित होता है, कभी निश्चल होकर ध्यान करता है संसार में जितने भी प्राणी हैं वे सब भगवत् स्वरूप हैं। ऐसा मानकर सर्वत्र भक्ति पूर्वक नमस्कार करें। हे निमिराज! इस प्रकार से भक्तिपूर्वक भगवान का भजन करते हुए भक्तों की भक्ति ज्ञानोत्पत्ति में समर्थ होती है और अन्त में वे मुक्ति प्राप्त करते हैं।

इतना सुनकर राजर्षि निमि ने पुनः प्रश्न किया हे योगियो! उन भक्तों की किस धर्म में अधिक श्रद्धा होती है कैसी वाणी होती है? कैसे चिन्ह हैं? यह सुनकर द्वितीय योगेश्वर उदयनाथ जी कहने लगे - हे राजन् भगवान के उत्तम भक्त आत्मा को सर्वत्र ब्रह्मवत् व्यापक देखते हैं।समस्त चराचर को आत्मा में देखते हैं। मध्यम श्रेणी के भक्त भेद -बुद्धि से भगवान में भक्ति करते हैं। तृतीय श्रेणी अगर हो जाए तो संसार को मायामय जानकर प्रतिकूल विषयों से बैर नहीं करते और अनुकूल विषयों से हर्षित नहीं होते हैं। वे श्रेष्ठ भक्त होते हैं। जो सदा भगवान का भजन करते हैं देहेन्द्रियों में लिप्त नहीं होते और धर्मानुकूल कर्मों का अनुशरण करते हैं। जिनका केवल ईश्वर ही आधार है वे उत्तम भक्त हैं जिनमें कुल का, जाति का, वर्ण का, आश्रम का, मित्र का, विद्या का, मान का, धन का, बन्धुओं का अभिमान नहीं है, प्राणी मात्र को समान देखते हैं वे उत्तम भक्त

है। जो विषय विलासों को तुच्छ मानकर भगवान का भजन करते हैं वे ही उत्तम भक्त हैं।

यह सुनकर राजा निमि ने हाथ जोड़कर फिर प्रश्न किया -हे योगेश्वरो! भगवन्मायामय हैं, ऐसा जो जानता है वह यदि उत्तम है तो माया का भी वर्णन कीजिए। यह सुनकर तृतीय योगी सत्यनाथ ब्रह्मा जी ने उपदेश दिया।

हे राजर्षे! प्राणियों को भोग मोक्ष आदि देने के लिए भगवान ने पंचभूतों से जितने भूत प्राणि उत्पन्न किये हैं वह उसकी माया है। जीव अन्तरात्मा के प्रदीप के प्रकाश से प्रकाशित इन्द्रियों के द्वारा विषय वर्ग का उपयोग करता हुआ देह मैं हूँ। इन्द्रिय मैं हूँ ऐसा जो मानता है वह भगवान की माया है। कर्मेन्द्रियों से कर्मकर सुख दुखादि भोगता हुआ प्राणी बारम्बार जन्म लेता है और मरता है। और मुक्ति नहीं पाता। यह भी भगवान की ही माया है।

समय आने पर सौ वर्षों तक निरन्तर अनावृद्धि होती है। सहस्र सूर्य तपते हैं। फिर सौ वर्षों तक निरंवच्छिन्नितया हस्तिशुण्ड समान जलधाराओं से मेघ बरसते हैं। तेज वायु में लीन होता है। वायु आकाश में लीन होती है। आकाश तामस अहंकार में लीन होता है। इन्द्रियों के साथ बुद्धि राजस्व अहंकार में लीन होते हैं। अहंकार महतत्त्व में लीन होता है। महतत्त्व प्रकृति में लीन होता है। इत्यादि यह त्रिगुणात्मक समस्त संसार भगवान की ही माया है।

महतत्त्व - सांख्य में प्रकृति का पहला कार्य जिससे अहंकार पैदा होता है

इतना सुनकर राजा निमि ने पुनः प्रश्न किया - हे सिद्धो! विषय वासना से बद्ध जीव इस माया से कैसे पार होते हैं? तब चतुर्थ योगेश्वर सन्तोषनाथ जी (विष्णु भगवान) बोले - राजन्! दुस्तर माया नदी को तैरने के लिए भक्ति की नौका के बिना दूसरा कोई साधन नहीं हैं। कर्म जालों में फंसे मोहान्धों का निस्तार नहीं है बिना भक्ति के नाना प्रकार के उपायों से उपार्जित धन भी सुखदाई नहीं होता।

इसी प्रकार से हे राजन्! अन्य वस्तुयें भी शाश्वत सुख नहीं देती। क्योंकि समस्त सांसारिक सुख क्षण भंगुर हैं। इसी प्रकार स्वर्ग में न्यूनाधिक तारतम्य से ईर्ष्या, द्वेष आदि दोषों से दुख अधिक है सुख अल्प है। कर्मफल की समाप्ति में नीचे गिरना पड़ता है। इसलिए कल्याणाकांक्षी को चाहिए कि कर्म और ब्रह्म दोनों के तत्त्व को जानने वाले सकल नियम तथा आगम में निष्णात योग के अनुष्ठान से अन्तः करण की वासना को भस्म करने वाले, पवित्र हृदय करतल में रखें आवले के समान समस्त भुवन को देखने वाले, शिष्य के चित्त का सन्ताप हरण करने वाले शिवयोगी गुरू की शरण में जावे। विधिपूर्वक गुरूकुल में निवास करता हुआ मनसा वाचा कर्मणा सर्वदा और सर्वथा भगवद बुद्धि से गुरू की

सेवा करता हुआ कटुता को त्यागकर निष्कपट भाव से हृदय के समस्त संशयों को गुरू चरणों में निवेदन कर गुरूपदिष्ट मार्ग से प्रथम मित्र, पुत्र, कलत्र, धन धान्य, देह, गेह आदियों में वैराग्यवान साधु संगति की रीति को जाने। तदनन्तर सुख में मित्रता दुख में करूणा पुण्यात्मा में मुदिता और पापों में उपेक्षा की भावना करता हुआ चित्त को प्रसन्न रखे। जलमत्रिका आदि से बाह्य शुद्धि एवं यम नियम आदि से अन्त करण की शुद्धि करता हुआ निर्लोभ, निष्परिग्रह, निरहंकार, निरामय, (स्वस्थ) निस्पृह, (निर्लेप, जिसे लोभ न हो) वीतराग, अवधूत होकर यदृच्छा लाभ से सन्तुष्टचित्त जटाधारी वल्कलवस्त्र वान कंदमूल, फलाहारी, जनसंसर्ग रहित होकर दिन बितावे। शास्त्रों में श्रद्धा, गुरू में भगवाद् बुद्धि, दुस्तर्को का परिहार (परित्याग), परापवाद का परित्याग, वेद विरूद्ध मतों का तिरस्कार, श्रुति संवादो से स्मृतियों की परीक्षा नित्यधर्म का चिंतन, स्वल्प भाषण, वृथालाप से विरक्ति, प्राणायाम में परायणता, इन्द्रियों का निग्रह, मन का वशीकरण और भगवान के जन्म कर्म गुणों का नित्य श्रवण तथा श्रेष्ठ कर्मो का ही आचरण इत्यादि अनवद्य (निर्दोष) कर्म गुरू से सीखने चाहिए। और विपरीत को त्याग देना चाहिए। यज्ञ, दान, व्रत, उपवास, जप, तप, सदाचार तथा अन्य जो वैदिक कर्म अच्छे लगें उनको ईश्वर प्राणिधान विधि से भगवान के चरणों में अर्पण करें। स्त्री, पुत्र, धन,

बन्धु, गृहादिक समस्त भगवत्प्रदत्त प्रसाद जानकर यथा समय उपभोग करें। पहले स्थावर उनमें, जंगम उनमें मनुष्य उनमें, धर्मसेवी भगवतभक्त उनमें, योगेश्वरों की ईश्वर बुद्धि से सेवा करनी चाहिए। जिनकी भगवान में तन्मयता होती है जब इस प्रकार पराभक्ति से भगवान में तन्मयता हो जाती है तब वह भक्त भगवान के दर्शन के बिना अपने को मन्द भाग्य जानकर धिक्कारता हुआ रोता है। कभी भक्त वत्सल भगवान भक्ति के वश में होते हैं। ऐसा सोचकर कभी हंसता है। कभी आर्त की तरह उच्च स्वर से चीत्कार करता है। कदाचित परमानंद से मुदित होकर नाचता है, कदाचित भगवान के ध्यान में निमग्न होकर स्थाणु समान निश्चल हो जाता है। इस प्रकार भगवान का भक्त माया से तर जाता है।

इस प्रकार से चतुर्थ योगेश्वर संतोषनाथ जी से सब ज्ञान सुनकर राजा निमि ने पुनः प्रश्न किया और कहने लगे - हे अवधूतों! ब्रह्म का क्या स्वरूप है? ब्रह्म, सदाशिव, नारायण, भगवान, परमात्मा, आदिनाथ, ईश्वर, गोरक्ष इत्यादि पदों का वाक्य एक है या भिन्न है? तब पंचम योगेश्वर अचलनाथ कहने लगे - हे विदेहराज! एक ही ब्रह्म संबंध भेदों में नाना नाम रूपों से भिन्न प्रतीत होता है। जो सृष्टि करता है वह सृष्टा है। जो रक्षा करता है वह गोरक्ष है। जो संहार करता है वह शंकर है। जो व्यापत करता है वह विष्णु है। जिसमें जगत

सोता है वह शिव है। जो विशेषकर विराजमान होता है वह विराट है। शसुख जिसमें होता है वह शम्भु है। जो प्राणियों का शासक है वह ईश्वर है। जो रूलाता है वह रूद्र है। जो जगत का नाश करता है वह शर्व है। जो समर्थ है, वह ईशान है। कर्मफल भोगने वाले जीव पशु होते हैं। उनका पालक पशुपति है। जो भूत प्राणियों का ईश है, वह भूतेश है। जो महान है वह महेश्वर है। जो प्राणियों का प्रेरक है वह प्रभु है जिससे संसार होता हैं वह भव है। नाना नाम रूपों में जो क्रीड़ा करता है, वह देव है। जो महान देव है वह महादेव है। जो व्यापत करता है वह आत्मा है। जो परम ईश्वर है वह परमेश्वर है। षडैश्वर्य भग होता है, भग वाला भगवान होता है। जल को नारा कहते है, नारा अयनपूर्व निवास जिसका है, वह नारायण है। जो सर्वान्त में शेष रहे, वह शेष है। इस हृदय में जो गमन करता है, वह इन्द्र है। शरीर के पुर में जो शयन करे वह पुरूष है। जो मिलने वाले का त्राण करे वह मित्र है। जो जगत का वरण करे, वह वरण है। जो जीवों का नियमन करे वह यम है। दहराकाश में जो गमन करता है वह मातरिश्वा है। जो समस्त नरों को अपने में लेता है वह वैश्वानर है। जो सर्वत्र जाता है वह वायु है। जो सर्वोच्च पद में ले जाता है वह अग्नि है। जो ऐश्वर्यवान होता है और जो आशीर्वाद से कल्याण करता है वह नाथ है। जो लोकों

का नाथ है, वह लोकनाथ है। जिसमें सब लोक बसते है, वह वसु है। जो विश्व का विधान और धारण करता है, वह विधाता है। जिसमें योगी रमण करते हैं, वह राम है। जो परिवृद्ध होता है वह ब्रह्म है। इस प्रकार एक परमेश्वर के नाना कार्य भेदों से नामों की निरूक्ति की जाती है। जो समाधि में परमज्योति है वह ब्रह्म है। जैसे स्फुलिंग 'महाग्नि' को प्रकाशित नहीं कर सकता, किन्तु आत्मा से प्रकाशित होती है। जहां से वेद भी मन के साथ लौट आता है। वहां इन्द्रियों की क्या कथा? जो वाणी का भी प्रेरक है वह ब्रह्म है। ऐसा कहकर श्रुति मौन हो गई। संसार जो स्थूल है और जो सूक्ष्म है वह ब्रह्म ही है। क्योंकि सबका मूल कारण ब्रह्म ही है। अनन्तः शक्ति होने से एक ही अनेक प्रकार से प्रतीत होता है। आत्मा न जन्मती है, न बढ़ती है, न परिणत होती है, और न ही क्षीण है और न नष्ट होती है। क्योंकि बाल्य तरूणता एवं वृद्धता देह, के धर्म हैं आत्मा के नहीं। आत्मा तो सर्वदा एक रस है। उसमें विकार लेश मात्र भी नहीं है और वह सबका आनंद दाता है।

यह सुनकर राजा निमिने पुनः प्रश्न किया - हे जगन्मंगल योगिश्वरो! अब आप लोग कर्मयोग का उपदेश दीजिए। जिस कर्मयोग से मनुष्य इसी जन्म में कर्म पास का छेदन कर कैवल्य मुक्ति लाभ करे। यही प्रश्न एक बार पिता इक्ष्वाकु के निकट सनकादि सिद्धों से किया था।

किन्तु उन्होंने उत्तर नहीं दिया। इसका क्या कारण है? ऐसा सुनकर षष्टम् योगेश्वर गजकन्थड़नाथ जी (गणेश जी) कहने लगे - राजन्! ईश्वर के विश्वासरूपी शब्द राशि वेद में कर्म अकर्म विकर्म ये तीन प्रकार के कर्म होते हैं। वेद अपौरूषेय हैं। जहां वाक्यों का पूर्वा पर समन्वय योगियों को भी दुष्कर है। कर्मगति गहन है। उस समय तुम बालक थे। इसी कारण से उन सिद्धों ने कर्मयोग का उपदेश नहीं दिया। वेद परोक्षवादी है (परम ज्ञानी) एक अर्थ को गुप्त रखकर द्वितीय अर्थ का प्रतिपादन करता है। जो जैसे समझता है उसको वैसा ही समझाता है। तदनुसार कर्म करता है। तदनुकूल ही फल मिलता है। जैसे रोगी बालक को वैद्य मिठाई के साथ औषधि देता है। वैसे ही वे स्वर्गादिसुख के लाभ से मोक्षार्थ पुरूष को कर्म योग का उपदेश देता है। जो वेदविहित कर्म नहीं करता वह घोर नरक में जाता है। जो वेदविहित कर्म करता है वह ज्ञान वैराग्य भक्ति लाभ द्वारा मोक्ष प्राप्त करता है। वेद में स्वर्गादि भोगों का जो उपदेश है वह केवल कर्म प्रशंसार्थ है। यह वैदिक कर्मयोग है। अब तांत्रिक कर्मयोग का वर्णन करते है। गुरूपदिष्ट मार्ग में प्राणायाम करके स्वेष्ट मूर्ति को मंत्रपूर्वक पादय अर्ध्य आसन मघुपर्क स्नान, वस्त्र, भूषण, गंध, चन्दन, पत्र, पुष्प, अक्षत माला धूप दीप नैवेद्य, पानसुपारी यज्ञोपवीत आदि सामग्री से यथाविधि पूजा करें।

स्तुति नमस्कार जप ध्यान करके भगवान की प्रदक्षिणा कर प्रसाद ग्रहण कर नैवेद्य खावें। मूर्ति को सिंहासन पर रखकर विसर्जन करे। इस प्रकार आराधन करे। इसी प्रकार प्रधान-प्रधान अग्नि, सूर्य, जल, वायु, पृथ्वी तथा अन्य दिक्पालों की उपासना परमेश्वर बुद्धि करे। ऐसा जो करता है। प्राणिधान से कर्मजाल से मुक्त है। जिस प्राकृत वस्तु में रूचि उत्पन्न हो उसमें भगवत् भावना करे। इस प्रकार यह तंत्र कर्मयोग है। कर्मयोगी विधि को सुनकर विदेहराज निमि ने भगवान के अवतार की जिज्ञासा की। राजा ने कहा - हे सिद्धो! भगवान समय-समय पर अपने अवतारों में जो कर्म करते है, वह मैं अब आप ज्ञानियों के मुखारविन्द से सुनना चाहता हूँ। कृपा कर आप मुझे उपदेश दीजिए। इतना सुनकर सप्तम् योगेश्वर चौरंगीनाथ कहने लगे - हे राजन्! जो भगवान के अनन्त जन्म कर्म गुणों की गणना चाहता है। वह समुद्र के बालु कणों की गणना करता है। वर्षा के बिन्दुओं की गिनती करता है। पृथ्वी के परमाणुओं की संख्या करता है। हे विदेह! तथापि प्रधानतया कहते हैं - उस परमेश्वर ने आकाशादि पंच महाभूतों को उत्पन्न कर ब्रह्माण्ड भाण्ड के उदर में स्वयं प्रवेश किया। तब वह पुरूष के नाम से विख्यात हुआ। जिसमें ब्रह्मा विष्णु रूद्र आदि उत्पन्न हुए। जो सृष्टि स्थिति आदि तय करते है। दक्ष प्रजापति की कन्या, धर्म की पत्नी के गर्भ से नर-नारायण नाम के दो अवतार

हुए। जो नारद आदि सिद्ध योगियों की मण्डली के साथ हिमालय के बद्रिकाश्रम में तपस्या करते है। वहां पर उनके योगबल से भयभीत इन्द्र ने एक समय तपोभंग करने के लिए सखा बसंत के साथ कामदेव को अप्सराओं सहित भेजा। तब कामदेव ने वहां पर बसन्त ऋतु के प्रबृद्ध हो जाने पर मेनका, रम्भा, मंजुघोषा, तिलोत्तमा, धताची, संकेशी प्रमुख अप्सराओं के लीला विलासों से उनकी समाधि खंडित करने में पूरा प्रयत्न किया। यह देखकर नर नारायण को क्रोध नहीं आया बल्कि कामदेव अपनी मूर्खता देखकर भय से कांपने लगा। उनको देखकर नर-नारायण बोले - हे सपरिवार मदन। तनिक भी डरने की आवश्यकता नहीं है। तुम्हारा स्वागत है। आतिथ्य ग्रहण करो। और हमारे आश्रम को कृतार्थ करो। क्योंकि जहां आतिथ्य सत्कार नहीं होता वहाँ देवता नहीं रहते। इतना सुनकर लज्जा से सिर झुकाकर हाथ जोड़कर आप्सराओं के साथ कामदेव नर-नारायण की स्तुति करने लगा। हे देव! आप माया से रहित हैं। निर्विकार है, निरन्जन हैं, निस्पृह हैं, निष्काम हैं, और योगेश्वर हैं। आपके चरणाविन्द की सेवा सुर नर-मुनि जन सदा करते हैं। आपका तपोभंग कौन कर सकता है। हे नाथ! आपके सेवक ही स्वर्ग का उल्लंघन कर बैकुण्ठ में अकुन्ठित गति से प्रवेश करते है। आपके सम्मुख बेचारा इन्द्र कौन है।

जिसके नाम से ही भक्त लोग विघ्नों को दूर कर देते हैं। उनका विघ्न कौन कर सकता है।

मनुष्य दो प्रकार के होते हैं। जो आपकी भक्ति त्यागकर योगार्थ कर्म करते हैं, वे प्रायः क्रोधादियों के वश में हो जाते है। वे अतीव क्लेश उठाते हैं। कुछ तपस्वीजन भूख, प्यास, शीत, उष्ण आदि द्वन्द्व सहिष्णु होते हुए भी कोप के वशीभूत तिनकों की अग्नि के तुल्य अल्प शक्ति देने वाले गोष्पद जल में डूब जाते हैं। चिरकाल सञ्चित तपस्या को भी निष्फल कर देते हैं। हे राजन्! जब कामदेव ने नर-नारायण ऋषि की ऐसी स्तुति की तो उन्होंने उनका गर्व चूर करने के लिए योगबल से हजारों दिव्य स्त्रियों की सृष्टि कर डाली। जिनका रूप लावण्य देखकर समस्त लोकों को मोहित करने वाली अप्सरायें और जगत का उन्मादन करने वाला मदन भी एक साथ मोहित हो गये। सहस्र चन्द्रों के सम्मुख तारागण के समान निस्तेज होकर लज्जा सागर में डूब गये। उनको ऐसा देखकर मन्दस्मित पूर्वक नर नारायण कहने लगे - हे हेमन्थ! इच्छानुसार इसमें से किसी कामिनी को माँगो तब निरूत्तर नीचे सिर किए हुए कामदेव ने बारम्बार आज्ञा देने पर सम्पदा से त्रिलोकी को वश में करने वाली उर्वशी नाम की स्त्री रत्न को ग्रहण कर नर-नारायण के चरणों में प्रणाम कर स्वर्ग के लिए प्रस्थान किया। अमरावती की सुधर्मा सभा में सिंहासनारूढ देवेन्द्र

की सेवा में ली नर-नारायण द्वारा प्रदत्त उर्वशी को समर्पित कर सारा वृतान्त सुनाया। जिससे इन्द्र देव लज्जित एवं विस्मित हुए। हे विदेह! अब अन्य अवतारों का चरित्र सुनो!

हंसावतार से परमेश्वर ने ब्रह्म को ब्रह्मविद्या का उपदेश दिया। दत्तावतार से अनुसूया को अतुल कीर्ति दी। सनकादि सिद्धों के अवतार से साधकों को सिद्धि दी। ऋषभावतार से नर ऋषियों को धर्म का उपदेश दिया। हयग्रीवावतार में दुःख से व्यग्र जीवों का उद्धार किया। मत्स्येन्द्रावतार से शंखासुर को मारा और औषधि बीजों के साथ मनु की रक्षा की। वराहावतार से हिरण्याक्ष को मारा और जलमग्न पृथ्वी का उद्धार किया। कूर्मावतार से मन्दराचल को धारण किया। और रत्न उत्पन्न किये। नृसिंहावतार से हिरण्यकश्यप को मारा और प्रह्लाद को आनन्दित किया। चक्री अवतार से चक्र द्वारा ग्राह को मारा और गजेन्द्र को मोक्ष दिया। कदाचित कश्यप की होम के लिए समिधा लाये, बालखिल्य ऋषियों को गोष्पद जलमग्न से बचाया। इन्द्र को ब्रह्महत्या से मुक्त किया। दैत्यों के बन्दीगृह से देवांगनाओं को मुक्त किया। पीयूषहरण के लिए मोहिनी अवतार से असुरों को मोहित किया। वामनावतार से पाताल में बलि का बन्धन किया और तीन चरणों में त्रिलोकी को व्याप्त किया। जामदग्नेय (परशुराम) अवतार से सहस्रबाहु का बल नष्ट किया पितरों का तर्पण किया।

रामावतार से रावण को मारा और लोक मर्यादा बांधी। कृष्णावतार में गोवर्धन को धारण कर उसका पूजन कर मान बढाया और नाना प्रकार की लीलायें की। बुद्धावतार से व्यर्थ की हिंसा को रोका और करूणा से लोकों का उद्धार किया। आगे कल्की अवतार से म्लेच्छों का उच्छेद कर सत्य युग में प्रवृत्त करेंगे। इस प्रकार यथा समय अवतार लेकर परमेश्वर जगत का प्रतिपालन करते हैं। इतना सुनकर राजा निमि ने पुनः प्रश्न किया - हे सिद्धों! हे योगेश्वरों! हे अवधूतों! जो नर भगवत् भक्ति रहित केवल विषय निरत रहते हैं उनकी क्या गति रहती है?

ऐसा सुनकर अष्टम् योगेश्वर करूणामय मत्स्येन्द्रनाथ जी बोले - राजन्! भगवान नारायण के विराट स्वरूप के मुख से ब्राह्मण बाहु से क्षत्रिय, ऊरू से वैश्य, पाद से शूद्र उत्पन्न हुए। सत्व प्रधान ब्राह्मण, सत्वरज़ प्रधान क्षत्रिय, रजस्तम प्रधान वैश्य, तम प्रधान शूद्र होता है। सदाचार में ब्राह्मण की प्रतिष्ठा है। शौर्य में क्षत्रिय की प्रतिष्ठा है। व्यवसाय में वैश्य की प्रतिष्ठा है। सेवा शूद्र की प्रतिष्ठा है। हृदय से ब्रह्मचर्य, कुक्षि से गृहस्थ, वक्षस्थल से वानप्रस्थ, मस्तक से चतुर्थ योगाश्रम उत्पन्न हुआ है। जो भगवान का भजन नहीं करते, वे अधम मरकर दुर्गति को प्राप्त करते हैं। कर्मजाल से मोहित मनुष्य भक्ति की निंदा करते हैं। किन्तु वे कभी भी शाश्वत सुख नहीं पाते। स्वार्थ के लिए जो सहस्रों अनर्थ करते हैं, उनका निस्तार

नहीं है। जो देश, जाति, कुल, धन, बन्धु, पुत्र, कलत्र, मित्र, शत्रु, बल, बुद्धि, विद्या अधिकार आदि से मुग्ध हुए मदान्ध लोग भगवान की और भगवत् भक्ति की निंदा करते हैं। उनका कल्याण नहीं है। जो न जानते हुए भी वेदज्ञों का अभिमान करते हुए निवृति पूरक, वेद की प्रवृत्ति पूरक करके प्रतिपादन करते हैं, अपने कपोल कल्पित मतों से मनुष्यों को मोहित कर स्वार्थ सिद्धि करते हैं, वे घोर नरक में जाते हैं। जो वेद विरूद्ध ग्रन्थों को बनाकर सिद्धियों के, ऋषियों के तथा भगवान के नाम से दुराचार का प्रचार करते हैं। केवल पशु हिंसा मद्य मांस मादक द्रव्य आदि अनाक्ष्य भक्षण से विषय विलास में निरत मनुष्य उत्तम गति नहीं पाते। धर्म के लिए धन है, दुर्विषय के लिए नहीं। परोपकार के लिए शरीर है, सुख भोगने के लिए नहीं। तत्वज्ञान के लिए विद्या है, वाद-विवाद के लिए नहीं। यज्ञ के लिए सोमरस है, यथेष्ठपान के लिए नहीं। आर्त्तरक्षा के लिए बल है, दीन दुःखियों का दलन करने के लिए नहीं। विषम परिस्थिति में कर्त्तव्य निर्णय करने के लिए बुद्धि हैं। परिच्छेद गवेषणा के लिए नहीं। इनका विपरित प्रयोग करने वाले खल (दुष्ट) कदापि कल्याण के भागी नहीं होते। जो निर्दयी पुरूष पशु हिंसा से अपना पेट भरते हैं, उनको पशु भी मरने के पश्चात् उसी प्रकार से हिंसा करते हैं। ज्ञानी भक्त अनायास ही भवसागर को पार करते हैं। जो मनुष्य

नित्य परनिंदा अपवाद पिशुनता अनिष्ट चिन्तन कलहादि में तत्पर रहते हैं और परलोक से निश्चिन्त रहते हैं। वे निखवधि नरक में जाते हैं।

इतना जानने के पश्चात् भी राजा निमि सन्तुष्ट नहीं हुए। उन्होंने जिज्ञासुवश होकर पुनः पूछा - हे योगेश्वरो! नारायण किस समय किस वर्ण और किस आकार के होते हैं। उनकी किस नाम और विधि से पूजा करनी चाहिए। तब नवम् योगेश्वर श्री शम्भूयति गोरक्षनाथ जी बोले - राजन्! चारों युगों में चारों वर्ण रूप और आकार धारण करने वाले भगवान को अनेक प्रकार की विधि से पूजन करते हैं। सतयुग में शुक्लवर्ण चारभुजाधारी जटाधारी बल्कल पहनने वाले ब्रह्मचारी रूप में भगवान रहते हैं। इस युग में मनुष्य शांत बैर विरोध से रहित, सब के मित्र, सुख, दुःख में समान, ध्यानी, योगी इन्द्रियजित होते हैं और वह ऊपर कहे हुए भगवान के स्वरूप का पूजन करते हैं। हंस सर्वदा बैकुण्ठ धर्म योगेश्वर मनु, ईश्वर, पुरूष, अव्यक्त परमात्मा आदि नामों का जाप करते हैं। त्रेतायुग में लाल रंग के चारभुजाधारी कमर में तीन लड़ की मेखला धारण करने वाले, यज्ञ मूर्ति भगवान होते हैं। उस समय के पुरूष धर्मात्मा, ब्रह्मज्ञानी होते हैं और श्री हरि नारायण का तीनों वेदों में कहे द्वारा वेद विधि से पूजन करते हैं। और वह पुरूष विष्णु यज्ञ, विष्णु गर्भ, सर्वदेव उरूकुम, वृषा, कपि, जयन्त, उरूगाय आदि नामों

का जप करते हैं। द्वापर युग में काले रंग के, पीले वस्त्रधारी, चक्रसुदर्शन को धारण करने वाले और वत्सादि लक्षणों से भूषित होते हैं। और तत्वज्ञानी पुरूष वेद और वासुदेव, शिवशंकर सच्चिदानंद, सर्वव्यापक, पतितपावन आदि नामों का जप करते हैं। कलयुग में श्यामवर्ण वाले, कान्तिमान और शंख चक्र, गदा, पद्मधारी, नन्द सुनन्द आदि पार्षदों से घिरे हुए श्री कल्कि भगवान होंगे। और उन्हीं के ईश्वर, गोरक्ष, माधव, विभु, सर्वज्ञ आदि नामों का जप करते हैं।

इस प्रकार से 'हे राजन्।' चारों युगों में भगवान की स्तुति पूजा की जाती है। किन्तु गुणग्राही मनुष्य और युगों की अपेक्षा कलियुग की ही अधिक प्रशंसा करते हैं। क्योंकि सत्युग में ध्यान लगाने से, त्रेता में यज्ञ करने से जो फल मिलता है। वह फल कलयुग में केवल नाम जपने से ही मिल जाता है। नाम जपने से ही मुक्ति रूपी शान्ति मिलती है। और जीव आवागमन से छूट जाता है। हे विदेहराज! दूसरे युगों की तरह ही कलियुग में प्रभु गोरक्षेश्वर प्रभु परमेश्वर होंगे उस समय हम भी जन्म लेकर भक्त कहावेंगे। राजन्! कलियुग में द्रविड़ देश में विशेषकर भगवान के भक्त जन्म लेंगे। जहाँ ताम्रपर्णि, कृतमाल, पयश्विनी, कावेरी और महानदी प्रतिची नदियां हों वह ही द्रविड़ देश है। मनुष्य उन नदियों का जल पीते हैं। वे अवश्य ही भक्त होते हैं। हे

राजा निमि! जो पुरूष देव, पितृ, ऋषि, गुरू होता है। वह भी यदि नारायण की शरण में जाय तो सब ऋणों से मुक्त हो जाता है। भक्ति में यह सामर्थ्य है। वह सब ऋण पूरे कर देती है। भूल से यदि भक्त से कोई पाप हो जाये तो भगवान क्षमा कर देते हैं। उनको प्रायश्चित नहीं करना पड़ता। वह हरिकृपा से दूर हो जाता है। इस प्रकार सब वर्णन सुनकर राजा निमि अत्यंत प्रसन्न हुए और षोड़षोपचार विधि से पूजा की। तत्पश्चात् नवनाथ सिद्ध वहां से अन्तर्धान हो गये।

राजा निमि उनके बताये हुए धर्म का पालन करते हुए कुटुम्ब सहित परमगति को प्राप्त हुए। ऋषि मुनि मण्डली भी इस आश्चर्य को देखकर अत्यंत प्रसन्न हुए।

चौरंगीनाथ जी द्वारा गरीब भक्त को स्वर्ण वरदान रूप में देना

कड़ाके की सर्दी थी। सब लोग अपने -2 घरों में सो रहे थे। लेकिन ठीक आधी रात के समय पहाड़ पर बने मन्दिर में योगी ने शंखनाद किया। यह शंख ध्वनि श्रद्धालु भक्त गरीब व्यापारी के कानों में पड़ी। वह बिना सर्दी की परवाह किए पहाड़ पर मन्दिर में जा पहुंचा। वहां पहुंचकर उसने देखा कि एक तपस्वी जटाधारी महात्मा आसन लगाये बैठा है।

सादर प्रणाम के पश्चात् उस श्रद्धालु ने महात्मा जी से पूछा कि इस समय शंखनाद करने का क्या कारण है?

महात्मा जी ने कहा - भक्त! शंखनाद भिक्षा के निमित्त किया है। भक्त ने सुनते ही कहा महाराज! मैं अभी भिक्षा लेकर आता हूँ। सांयकाल की बनी बाजरे की रोटी और सरसों का साग लेकर वह थोड़ी ही देर में मन्दिर में उपस्थित हो गया।

बाबा भोजन करके अति प्रसन्न हुए। बाबा ने भक्त से पूछा कि तुम क्या काम करते हो? उसने बताया छोटी सी दूकान है। घर का गुजारा भी कठिनता से होता है। क्योंकि साधु -संतो की संगत में आने के पश्चात् मैंने झूठ बोलना छोड़ दिया है।

बाबा भक्त के इस कथन से अत्यंत प्रभावित हुए। उन्होंने भक्त को वरदान दिया कि धूणे के पास झाड़ी से एक पत्ता प्रतिदिन तोड़कर उसे पानी में उबाल लेना यह सोना बन जाएगा। सोना बेचकर अपना गुजारा ठीक से कर लेना। लेकिन स्मरण रहे यदि एक से अधिक पत्ता तोड़ा तो यह वरदान समाप्त हो जाएगा। भक्त खुशी -2 से अपनी आजीविका सोना बेचकर करने लगा। एक दिन लोभवश कई पत्ते एक साथ तोड़कर प्रतिदिन की परेशानी से बचने के लिए उबाल दिए। थोडी देर बाद देख तो पत्ते पत्ते ही रह गये। वरदान समाप्त हो चुका था। अब उसके पास पछताने के अलावा कुछ भी शेष नहीं रह गया था।

किसान के पात्र को अक्षय भोजन का वरदान

वर्षा ऋतु में एक निर्धन किसान ने अपने खेत में बिजाई करने की योजना बनाई। उसने अपने चार -पांच पड़ोसियों को भी अपनी सहायता के लिए बुला लिया। दोपहर के भोजन के लिए उसने थोड़े से चावल पकाकर उनमें खाण्ड मिला ली।

पहाड़ से ऊतर कर योगी पूरणनाथ भी नीचे आ गये। उन्होंने किसान से कहा -बच्चा! हमारी भी भोजन की इच्छा है। किसान योगी के मुखमंडल को देखकर तुरन्त समझ गया कि यह तो कोई सिद्ध योगी है। उसने हाथ जोड़कर महात्मा जी को प्रणाम किया और कहा -बाबा! आप बैठिये और सहर्ष भोजन स्वीकार कीजिए।

एक अज्ञात महात्मा को आया देखकर हल चलाने वाले किसान, गाय चराने वाले ग्वाले और खेतों में काम करने वाले मजदूर वहां सैंकड़ों लोग इक्टठा हो गए। महात्मा जी ने कहा - आप सब लोग बैठ जाये, हम सब एक साथ ही भोजन करेंगे।

किसान के पास तो थोड़े से चावल थे। यह सुनकर वह बुरी तरह घबरा गया।

महात्मा बीच में और चारों और सब किसान बैठ गए।

महात्मा जी ने किसान से कहा भक्त! सबको भोजन परोस दो। हिम्मत करके वह सबको भोजन परोसने लगा। सब लोग भोजन करके अत्यंत प्रसन्न हुए और भोजन जितना था उतना ही बना रहा। यही था चौरंगीनाथ जी का किसान के पात्र को वरदान।

सबके चले जाने के पश्चात् महात्मा जी भी पहाड़ की तरफ चल पड़े। किसान ने महात्मा जी के चरण छूने चाहे किन्तु कुछ ही क्षणों में वह अन्तर्ध्यान हो गए।

काशी में आगमन

एक बार चौरंगीनाथ जी की काशी यात्रा की इच्छा हुई। चलते -2 योग प्रचार करते -2 वह काशी की और रवाना हुए। मार्ग में उन्होंने एक भक्त से पूछा -भक्त! काशी कितनी दूर है? उस समय हरियाणा में गुडगांव के पास एक काशी गांव था। उसने तुरन्त काशी की दूरी बता दी। उसे नहीं पता था कि योगी तीर्थ स्थान काशी के विषय में पूछ रहे हैं।

काशी में पहुंचते ही पूरणनाथ जी ने देखा यह तो तीर्थ नहीं है बल्कि कोई गांव है। यह गांव ऊंचे पहाड़ पर था। आपने सोचा यह स्थान तो योगाभ्यास के लिए उत्तम है। आपने उचित स्थान देखा और अपना आसन लगा लिया। कुछ समय आपने यहां तपस्या की।

यहां रहने वाले लोगों ने आपके आने का समाचार दूर -2 तक फैला दिया। वहां पर आपके अनेक सेवक एवं श्रद्धालु बन गये। जो आपकी सेवा में सदैव तत्पर रहते थे। इन्ही सेवकों में आपका एक जाहुड नाम का सेवक भी था। उसका निवास स्थान वहां से 5 मील की दूरी पर था। उसके गांव का नाम हरसरू था। भक्त ने प्रतिदिन आने जाने की बजाय योगी जी से पूछा और वहीं रहने की अनुमति मांगी। चौरंगीनाथ जी ने उसे सहर्ष वहीं रहने की अनुमति दे दी। उसे भी योगीजी ने अपना

शिष्य बनाया और योग साधना सिखाई। बाद में यही काशी गांव बिगड़कर कासन गांव के नाम से जाना जाने लगा।

नालपुर बिस्सा की ओर प्रस्थान

नालपुर बिस्सा झुंझुनू जिले में है। एक बार चन्द्र अवतार ज्ञान पुंज अज्ञान को दूर करने वाले विध्नहर्ता जिनका नाम सुनने से ही प्राणी मात्र का कल्याण हो जाता है वह भ्रमण करते -2 योग प्रचार करते -2 नालपुर (बिस्सा) राजस्थान जा पहुंचे। पहले यह स्थान घने जंगलों में था। और यह पहाड़ी स्थान था। इन्ही पहाड़ों में योगाभ्यास के लिए आपने एक रमणीय एवं सुरक्षित स्थान देखा और अपना आसन लगा लिया। इन्ही पहाड़ों में गुरू गोरक्षनाथ जी अपने शिष्यों सहित तपस्या करते थे।

यह नालपुर गांव के लोगों का सौभाग्य ही है कि इन्हें संसार की दिव्य एवं आलौकिक शक्तियों की तपोभूमि में जन्म लेने का सुअवर प्राप्त हुआ।

जिन -2 महान आत्माओं ने इस परम पवित्र तपोभूमि पर अपना पांव रखा, उन्होंने भगवान की सृष्टि के रहस्य और तत्व को जानकर तदनुकूल आस्था, श्रद्धा ओर विश्वास के साथ ही अपना जीवन प्रशस्त किया है। समय -2 पर चौरंगीनाथ जी ने अपने भक्तों एवं शिष्यों को दुराचारियों से रक्षा की और अनेक चमत्कार दिखाये।

गुरू गोरक्षनाथ जी द्वारा अटन पटन शहर का योगियों का निरादर करने पर ध्वस्त करना

गुरू गोरक्षनाथ जी अपने शिष्यों सहित नालपुर के पहाड़ों पर तपस्या करते थे। उस समय यह अटन पटन शहर 36 किलोमीटर में फैला हुआ था। बहुत ही सुन्दर शहर था और आसपास अत्यंत रमणीय स्थल थे। शहर में अपनी आवश्यकता की वस्तुओं की सुलभता के कारण गोरक्षनाथ जी ने अपना धूना पास ही पहाड़ियों में लगा रखा था।

अटन पटन शहर से श्री चौरंगीनाथ जी अपने गुरू के लिए प्रतिदिन भिक्षा लेकर आते थे। एक दिन गुरूजी की निगाह चौरंगीनाथ के सिर पर पड़ी उन्होंने देखा कि चौरंगी के तो बाल उड़ गए हैं। गुरूजी ने कहा - बच्चा! तुम्हारे सिर के बाल कैसे उड़ गए? गुरूजी अन्तर्यामी थे फिर भी वह शिष्य के मुख से ही सत्य सुनना चाहते थे।

चौरंगीनाथ जी सच्चाई बताने लगे - सर्वप्रथम उन्होंने गुरूजी से कहा -हे गुरूदेव! इस शहर में कोई भी भिक्षा नहीं डालता। इसलिए मैं प्रतिदिन जंगल से लकड़ी बीन कर लाता हूँ और उन्हें शहर में बेचता हूँ। उसके बदले में मैं भोजन सामग्री खरीदता हूँ। खरीदी हुए सामग्री

शहर में बसी एक कुम्हारिन को देता हूँ जिससे वह भोजन तैयार करके मुझे देती है।

गुरूजी सच्चाई सुनकर अत्यन्त क्रोधित हुए। कहने लगे साधुओं का इतना निरादर। गुरूजी ने कहा -कुम्हारिन से कहो कि परिवार सहित शहर छोड़कर चली जाए। यह काम उसे दिन निकलने से पहले ही करना है। यदि उसे विश्वस नहीं हो तो उसे कहना कि खाली सूप छत पर रखकर देख ले यदि रात में मिट्टी से भर जाता है तो उसे शहर छोड़ने में ही फायदा है। गुरू आज्ञानुसार पूरणनाथ जी ने कुम्हारिन को गुरू आदेश कह सुनाया। संदेह की दृष्टि से उसने सूप छत पर रख दिया। आधी रात को ही सूप मिट्टी से भर गया। यह देखकर कुम्हारिन घबरा गई वह दिन निकलने से पहले ही परिवार सहित शहर से बाहर चली गई। जैसे ही वह शहर से बारह निकली एक अद्भुत घटना घट गई। एकदम चारों और घोर अन्धकार हुआ और देखते ही देखते अटन पटन शहर पूरा का पूरा धरती में समा गया।

वर्तमान में बसे रामपुरा एवं त्यौदा ग्राम के बीच में स्थित भूमि वाले इस शहर के अवशेष और प्रणाम आज भी मिलते हैं। कुछ दिन पहले यहां से खुदाई करने पर एक स्वर्ण मूर्ति निकली जो सरकार के खजाने में जमा करा दी गई। यह भूमि पुरातत्व विभाग को सौंप दी गई है।

मां इन्छरादे की अन्तिम इच्छा पूरी करना

एक दिन पूरणनाथ जी ने गुरूदेव से कहा - गुरूदेव! आज तो मुझे स्वप्न में अपनी बीमार मां के दर्शन हुए। वह मुझसे आखिरी बार मिलना चाहती है। ऐसा मुझे आभास हो रहा है। गुरूजी ने कहा बेटा! तुम्हारी मां बहुत बीमार है और उसका जीवन कुछ ही दिन शेष है। तुझसे मिलने की उसकी इच्छा है। इसलिए तुम मेरा कहना मानों और जल्दी अपनी मां से मिलने जाओं।

चौरंगीनाथ जी ने विचार किया कि -मां की अन्तिम इच्छा पूरी करना और उनका संस्कार करना मेरा कर्तव्य है। इसलिए वह शीघ्रता से स्याल कोट की ओर चल पड़े।

वहां पहुंचकर उन्होंने मां को धीरज बंधाया। भगवान का नाम सुनाया और मां के मुंह में गंगाजल डाला। भगवान का नाम सुनते -2 ही मां परलोक सिधार गई। आपने पूरी वेद विधि के अनुसार अपनी माता का अन्तिम संस्कार किया। तत्पश्चात् आप अपने गुरू गोरक्षनाथ जी के पास पहुंच गए।

हरियाणा अस्थल बोहर में आगमन

सिद्ध चौरंगीनाथ जी ऊपरी प्रांतों से चलते -2 योग प्रचार करते -2 रोहितासगढ़ आधुनिक रोहतक शहर आ पहुंचे। सौभाग्य से आपके उचित एवं रमणीय स्थल भी बोहर के जंगलों में उपलब्ध हो गया। उस समय यहां बड़ा ही रमणीय और अनेक वन्य पशु-पक्षियों से सम्पूरित जंगल था। इसी जंगल के मध्य में एक तालाब भी था। जो कि समस्त पशु पक्षियों की प्यास बुझाता था। ठीक इसी वन के मध्य योगी श्री ने अपना आसन लगा लिया। जब दूर-दराज लोगों को यह ज्ञात हुआ कि एक सिद्ध योगी जंगल में आसन लगाकर बैठे है। तो श्रद्धालुओं की सेवा से प्रसन्न हो उन्होंने आशीर्वाद देते थे। और उन्हें व्याधियों से मुक्त कर सुख पहुंचाते थे। परन्तु दुख का विषय है कि संसार में व्याधियों का अंत नहीं है। कारण यह हुआ कि आपने साधना के लिए जो गुफा तैयार की थी भक्त उसका भी द्वार खटखटाने लगे। इससे आपकी योग साधना में विध्न आने लगा। यह देख आपने घोषणा करा दी कि हमारे पास औषधि साक्षात् न लेकर हमारे तालाब की मिट्टी निकाल जाये। ऐसा करने से उनकी शारीरिक व्याधि शांत हो जायेगी। यह हमारा इस तालाब को आशीर्वाद है।

माह चौदस को साक्षात दर्शन

सिद्ध चौरंगीनाथ जी सांसारिक लोगों से दूर रहना चाहते थे। इसीलिए उन्होंने लोगों से साक्षात् न मिलने की घोषणा करा दी थी। प्रतिदिन लोगों के आने से आपका साधना समय नष्ट होता था। श्रुद्वालु भांति -2 के प्रश्न करते थे। आपने श्रद्धालुओं से कहा -भक्तों यदि आपको हमारे साक्षात् दर्शन करने हो तो माघ मास की चतुर्दशी को दर्शन करके आशीर्वाद ले सकते हो। वर्ष में केवल एक ही दिन हम अपनी समाधि स्थगित कर भक्तों की अभिलाषा एवं उनकी मनोकामना पूर्ण करेंगे। यह सुन श्रद्वालुओं ने आपसे आशीर्वाद लिया और वहां से विदा हो गए।

इस प्रकार लोगों ने आपकी गुफा में आना बंद कर दिया। यदि किसी को कोई रोग होता तो वह तालाब से मिट्टी निकालकर चले जाते थे। तब से लेकर आज तक माघ मास की चतुर्दशी को मठ अस्थल बोहर में मेला लगता है।

नाथ सम्प्रदाय विष्कृति के अनुसार अपने अस्थल बोहर में 151 से 270 विक्रम सम्वत् तक तपस्या की तत्पश्चात् आपने बलियाना एवं गांव गान्धरा में भी कुछ समय तक तपस्या की थी।

खांड के बोरे नमक में परिवर्तित

सिद्ध चौरंगीनाथ जी की तप साधना से इस भूमि की दिव्यता में वृद्धि हुई यह पवित्र भूमि योगियों और संतों के लिए प्रेरणा और साधना के लिए केन्द्र बनी।

एक दिन आप सन्ध्या वन्दन की तैयारी कर रहे थे। तभी वहां एक बन्जारा खांड के बोरे लेकर आ पहुंचा। उस समय यह मठ सघन वन से घिरा हुआ था। बन्जारे ने वहां एक विशाल तालाब देखा तो वह तालाब के किनारे ही विश्राम के लिए ठहर गया। लक्खी बनजारे ने अपने सेवक से कहा कि जाकर योगी से धूने की अग्नि लेकर आये।

सेवक योगी के पास पहुंचा और अग्नि के लिए आग्रह किया।

योगी ने पूछा - भक्त! अग्नि तो तुम ले जाओ किन्तु तुम्हारे बोरों में क्या भरा हुआ है?

वह सोचने लगा यदि योगी से सत्य कहूँगा तो कहीं यह खांड न मांग बैठे। उसने झमेले से बचने के लिए झूठ ही कह दिया। वह बोला बाबा! बोरों में तो नमक भरा है।

चौरंगीनाथ जी तो पहुंचे हुए सिद्ध थे। एकदम से वह समझ गये कि यह झूठ बोल रहा है। उन्होंने उसी समय खांड को नमक में परिवर्तित कर दिया।

अगले दिन सुबह -2 लक्खी बनजारा अपने सेवक के साथ माल लेकर समीप के नगर में पहुंचा। अपना माल देखा तो उसके होश ही उड गये। सभी बोरों में नमक ही नमक था। उसने अपने सेवक से पूछा -यह कैसे संभव हुआ? कुछ ही देर में उसे स्मरण हो आया वह कहने लगा कल रात को जब वह योगी से अग्नि लेने गया था, तब उन्होंने पूछा था कि बोरों में क्या है? मैंने उन्हें झूठ कह दिया था कि बोरों में नमक भरा है। वह कहने लगा- मालिक! मुझे तो लगता है कि योगी के कोप से ही हमारी खांड नमक में बदल गई है।

यह सुनते ही बन्जारा योगी के पास पहुंचा उनके श्री चरणों में गिरकर फूट-फूटकर रोने लगा। वह उनसे बारम्बार क्षमा याचना करने लगा। इस प्रकार उसे रोते देखकर संत हृदय द्रवित हो उठा। उन्होंने बनजारे का उठाया ओर कहा - भक्त! जाकर देखो तुम्हारे बोरों में खांड ही है और मेरे आशीर्वाद से खूब लाभ से बिकेगी। किन्तु स्मरण रहे भविष्य में कभी किसी योगी से झूठ नहीं बोलना। आशीर्वाद पाकर वह वापस आया, देखा, बोरों में खांड ही है। और उस दिन बहुत लाभ से बिकी। वह पुनः योगी के पास पहुंचा। उसने योगी से वहां एक मन्दिर बनवाने की अनुमति मांगी। योगी का आशीर्वाद पाकर उसने वहां एक मन्दिर का निर्माण कराया। उसकी दीवारें साढ़े सात फुट चौड़ी तथा उतनी ही मोटी हैं। वही मन्दिर आज भी अस्थल बोहर में विद्यमान है।

तपस्यारत सिद्ध चौरंगीनाथ जी

बारह वर्ष तक गुफा में साधना

गुरूगोरक्षनाथ जी से दीक्षा ग्रहण करने के पश्चात ही चौरंगीनाथ जी सिद्ध हुए। उन्होंने गुरू कृपा से इतनी सिद्धियां प्राप्त की, कि साधना के मार्ग पर चलते हुए आपने यह जान लिया कि कहां होता है अपने स्वरूप का बोध और पूर्ण तत्व के ज्ञान का अनुभव।

अत्यंत उज्ज्वल वर्ण, सिर पर बडी -2 स्वर्ण जटायें, नेत्र स्थिर, मुख पर साधना का प्रखर तेज जो भी आपको देखता तो स्वयं ही समझ लेता था कि यह उच्चकोटि के योगी हैं।

एक दिन आपने अपने शिष्यों को समझाया कि मैं बारह वर्ष पर्यन्त समाधि लगा रहा हूँ। तुम सब मेरे शरीर की रक्षा करते रहना। तत्पश्चात् वह समाधि में बैठ लीन हो गये।

उस बीच शिष्य बारी -2 से आपके शरीर की रक्षा करते थे। और ऐसे ही जाकर भिक्षा मांगने जाते थे। जो भी रूखा सूखा मिलता उससे ही अपना पेट भर लेते थे। उस शहर में जैन धर्म के लोग अधिक थे। वह सब नाथों के प्रति द्वेष की भावना रखते थे। जैन धर्म के सन्यासियों को पुष्टिदायक उचित भोजन तथा नाथ योगियों को रूखा-सूखा बचा हुआ भोजन देते थे। 12 वर्ष देखते ही देखते व्यतीत हो गये। योगी जी की समाधि टूटने का

समय आ गया। समाधि टूटते ही उनकी दृष्टि अपने शिष्यों पर पडी। सब के सब दुर्बल हो गये थे। चौरंगीनाथ जी को देखकर आश्चर्य हुआ कि यह सब इतने दुर्बल कैसे हो गये? उन्होंने पूछा तुम्हारी यह स्थिति कैसे हुई?

शिष्य कहने लगे - गुरूदेव! आपके समाधि काल में हम बारी -2 से भिक्षा लेने समीप के नगर में जाते थे। वह लोग हमे रूखा सूखा तथा जैनियों को स्वादिष्ट भोजन देते थे।

श्री चौरंगीनाथ जी को सुनकर अत्यंत दुख हुआ। उन्होंने इस भेद भाव पूर्ण व्यवहार के प्रति उनको शाप दिया। कहा -शिष्यो जाकर नगर में घोषणा कर दो कि रात बारह बजे यह पूरा का पूरा नगर ध्वस्त हो जाएगा। नगर वासियों ने कोई ध्यान नहीं दिया कहने लगे - कल तो हमसे मांग कर खाते थे, आज यह श्राप देने वाले बन गए। किन्तु योगी का श्राप कभी भी मिथ्या नहीं होता। ठीक बारह बजे रात्रि पूरा नगर धरती की गोद में धंस गया।

नाथ सिद्ध योगियों के अनुसार सिद्ध चौरंगीनाथ मठ अस्थल बोहर से ही अन्तर्ध्यान हुये थे।

पहरावर गांव का बसना (जनश्रुति)

सिद्ध चौरंगीनाथ जी के शिष्यों ने अपने गुरूदेव को यह बताया कि केवल एक ही ब्राह्मणी पूरे जैन नगर में ऐसी थी जो दयालु स्वभाव की थी। वह ही हमें उत्तम भोजन कभी -2 भिक्षा में दे देती थी।

यह सुन गुरूजी प्रसन्न हुए। उन्होंने कहा -शिष्यो! जाकर उस ब्राह्मणी से हो कि रात बारह बजे रात्रि से पहले नगर से परे चली जाए। शिष्यों ने ऐसा ही किया। ब्राह्मणी भगवान की परम -भक्त थी। वह योगियों की शक्ति को जानती थी। उसने पूछा - बाबा! मैं कहाँ चली जाऊं। उन्होंने कहा -तुम्हारे नगर में एक बिल्ली ने बच्चे दे रखे हैं। जानवरों को पहले से ही ज्ञात हो जाता है कि कुछ अनिष्ट होने वाला है। वह गांव छोडकर जा रही है। तुम ऐसा करो। उस बिल्ली के पीछे -2 चली जाओ। जहां भी यह बिल्ली अपने बच्चों को रख दे। तुम भी वहीं रहना। कहकर शिष्य गुरूदेव के पास आ गये।

कहते हैं रात्रि बारह बजे पूरा नगर विनाश को प्राप्त हो गया केवल एक ब्राह्मणी ही बची थी, जो नगर छोड़कर परे चली गई थी। उस ब्राह्मणी के परे चले जाने से ही उस जगह का नाम पहरावर पड़ा। और आज वहां

पूरा गांव ही बसा हुआ है। बताते है कि वह पूरा गांव उस ब्राह्मणी की ही सन्तान है। आज भी वह पूरा गांव ब्राह्मणों का है

नाथ योगियों के प्रति यह गांव सदैव नतमस्तक रहता है। और वह जैन नगर पूरा एक विशाल टीले के रूप में परिवर्तित हो गया। जो कि मठ अस्थ्ल बोहर से कुछ ही दूरी पर ध्वस्त पड़ा है और अपने विनाश की कहानी अपने ही मुख से कहता नजर आता है।

समय -2 पर जो खुदाइयां होती हैं उनमें अनेक जैन धर्म से संबंधित पाषाण प्रतिमायें प्राप्त होती रहती हैं। जो कि मठ अस्थल बोहर के संग्रहालय में सुरक्षित रखी हुई हैं।

सिद्ध चौरंगीनाथ जी की शिष्य परम्परा

योगियों के चरण कमल जहां भी पड़ते हैं। वहीं मनोवांचिछित फल देने वाले तीर्थ स्वयं ही बन जाते हैं। चौरंगीनाथ जी एक वचन सिद्ध योगी थे। उनके श्रीमुख से निकला हुआ प्रत्येक वचन सर्वदा सत्य सिद्ध होता था।

एक दिन चौरंगीनाथ जी अपने शिष्यों के साथ बैठे हुए थे। वह उन्हें समझा रहे थे कि आने वाले समय में मठ की यह परम्परा होनी चाहिए कि जो भी अतिथि मठ में आए, तीन दिन तक उनका आतिथ्य सत्कार होना चाहिए। तीन दिन के पश्चात् ही उनसे कोई कार्य लेना। योगीश्री जब तक अस्थल बोहर में रहे तब तक उनकी बनायी परम्परा उनके शिष्य निभाते रहे। किन्तु उनके जाने के पश्चात् सभी शिष्यों ने इस परम्परा का उल्लंघन कर दिया।

एक बार भ्रमण करते -2 श्री बाबा मस्तनाथ जी इस मठ में पधारे। उस समय बाबाजी औघड़ ही थे। दर्शनी योगी नहीं हुए थे। वहाँ पधारते ही सिद्ध चौरंगीनाथ जी के शिष्यों ने परम्परा का उल्लंघन करते हुए श्री बाबा जी को आदेश दिया कि "हे औघड़"! जाओ और मठ के घोडो के लिए इसी समय घास खोदकर लाओ।

अतिथि मर्यादा वह कब से छोड़ चुके थे।

श्री बाबा मस्तनाथ जी ने उनसे कहा सारा ले आऊं या फिर कुछ छोड़ भी आऊं। प्रश्न का किसी ने भी उत्तर नहीं दिया। आदेशनुसार वह मठ के घोड़ो के लिए घास खोदने चल पड़े। कुछ ही देर पश्चात् जब वह घास का गठ्ठर लेकर पधारे तो वहां उपस्थित सभी योगियों तथा साधुओं ने प्रत्यक्ष देखा कि घास का गट्ठर बाबाजी के सिर से सवा हाथ की ऊँचाई पर चला आ रहा है। यह चमत्कार देखकर वहां उपस्थित योगियों ने कहा यह तो कोई दिव्य पुरूष हैं या फिर पहुचा हुआ सिद्ध है।

मठ में एक पहुंचा हुआ सिद्ध था। उसने बाबाजी से पूछा -हे योगी! सारा उखाड़ लाये या फिर कुछ छोड़ा भी है। बाबा मस्तनाथ जी ने कहा - अढाई छोड़ आया हूँ। यह सांकेतिक भाषा थी। इतना कहकर बाबाजी बिना अन्न जल ग्रहण किए वहां से विदा हो गए।

सिद्ध योगियों की भाषा सिद्ध योगी ही समझ सकते हैं। वह बाबाजी के संकेत को ससमझ गये कि अब तो मठ में अढाई साधु ही बचेगें। शेष सबके विनाश का समय आ गया है।

जनश्रुतियों के अनुसार श्री बाबाजी के श्राप से ही यह विशाल समृद्ध मठ ध्वस्त हो गया था। केवल सिद्ध चौरंगीनाथ जी की पावन ज्योति को प्रज्वलित करने के लिए अढाई योगी ही शेष रह गये थे। मठ का वह

वैभवशाली रूप जिसमें 360 सिद्ध योगियों की पालकियां धर्म प्रचार के लिए यहां से चलती थीं वह सब मात्र स्वप्न बनकर ही रह गयी।

लाढ़ौत गांव के लोगों की पानी की समस्या दूर करना

प्राचीन समय की बात है। गांव लाढ़ौत में पानी की कमी से त्राहि -2 मची हुई थी। साधारण जन को पीने के लिए एक बूँद पानी भी उपलब्ध नहीं होता था। पशु भी पानी की कमी से कुछ तो मर चुके थे और जो बचे हुए थे वह भी गांव छोड़कर इधर उधर जाने लगे। पक्षी भी उड़कर दूर दराज चले गये थे। यह कोई दैवी प्रकोप ही था जो सब पानी की कमी से सूख -2 कर अपने प्राण त्याग रहे थे।

उसी गांव का एक भैसा प्रतिदिन कहीं बाहर जाता और शाम को लौटकर आता था। मुश्किल की घड़ी में कुछ दिन तो लोगों का ध्यान उस भैसे की ओर नहीं गया। किन्तु जब कुछ लोगों ने यह देखा कि यह भैसा तो प्रतिदिन नहाकर आता है। जबकि गांव वाले पानी की कमी से मर रहे हैं। यह देख सब दंग रह गये। बुजुर्ग लोंगों की पंचायत बैठी और फैसला लिया गया कि सच्चाई का पता लगाना चाहिए। उन्होंने भैसे के गले में एक रस्सा बांध दिया। और उसके पीछे -2 चल दिए। उन्होंने देखा कि भैसा तो दूसरे गांव में जाता है। और वहां पर एक विशाल तालाब पानी से लबालब भरा है।

चारों ओर घनी हरियाली ही हरियाली है। यह देखकर उनकी प्रसन्नता का ठिकाना नहीं रहा। तत्पश्चात् वह इधर -उधर घूमने लगे। लोगों ने वहां एक प्राचीन मन्दिर देखा था यह मन्दिर गांव बलियाना के बसने से पहले का है।

मन्दिर से कुछ ही दूरी पर एक तालाब है जिसका जिक्र पहले किया जा चुका है। तालाब की पौड़ियाँ कांच की थी।उन पर सिद्ध योगी ही स्नान के लिए जाते थे। तालाब की दूसरी ओर छोटी ईटों की सीढ़ियाँ थीं, उन पर श्रद्धालुजन स्नान किया करते थे। तालाब से कुछ ही दूरी पर एक कुआं भी था। योगीजन इसी का जल प्रयोग करते थे। गांव के लोग भी इसी का जल प्रयोग करते थे। कुएं पर स्नान करना वर्जित था।

मन्दिर के समीप ही एक विशाल एवं प्राचीन धर्मशाला थी। बाहर से देखने में यह धर्मशाला दो मंजिल की दिखती थी। किन्तु थी एक ही मंजिल। तालाब, कुएं तथा धर्मशाला के बीचोबीच ही यह मन्दिर विद्यमान था। जो कि चौरंगी नाथ जी का था। इसमें अखंड ज्योति 10-12 वर्षों से आज प्रज्ज्वलित है।. सिद्ध योगी का धूना भी उसी समय से चेतन है। जिसके सहस्रों श्रद्धालु दर्शन करते हैं। तथा शीश नवाकर अपनी मनोकामना पूर्ण करते हैं।

कहते हैं इस में कोई भी विवाहित महिला अपना घूँघट नहीं खोलती। यह मान्यता प्राचीन समय से

ही है क्योंकि गांव के लोगों ने चौरंगीनाथ जी को दादा की पदवी दे रखी हैं। मन्दिर को पीली मिट्टी से लीपने की परम्परा है। मन्दिर में हीरानाथ जी के शिष्य रामेश्वरनाथ जी ने 20-25 वर्ष तक पूजा की। उनके पश्चात् उनके ग्रहस्थी शिष्य यह कार्य कर रहे हैं। बाद में पूरे गांव के लोग लाढ़ौत छोड़कर बलियाणा में आकर बस गये।

बकरी का दूध चमत्कारिक रूप से स्वयं निकलना

सैकड़ों वर्षों पहले गुरू गोरक्षनाथ जी एवं उनके शिष्य पूरणमल (चौरगीनाथ) ने जनता की सुख-शान्ति एवं समृद्धि के लिए राजस्थान के झुन्झुनू जिले ग्राम नालपुर बिस्सा में कठोर तपस्या की थी। उस समय यह स्थान चारों और घने जंगलो से घिरा हुआ था। चारों ओर हरियाली ही हरियाली थी।

एक गडरिया प्रतिदिन यहां अपनी बकरियां चराने जाता था। उस समय चारों ओर पहाड़ और जंगल ही जंगल थे। उसने देखा एक बकरी का दूध प्रतिदिन एक पत्थर की दरार में अक्सर चमत्कारिक रूप से निकल जाता है। गडरिये ने उस दरार को छुआ तो वह वहीं पर चिपक गया। पूरी रात गडरिया उसी पत्थर पर दरार से चिपका हुआ बैठा रहा। बकरियां शाम को घर पहुंच गयीं किन्तु गडरिये के न पहुंने पर घरवालों को चिंता हुई। उस समय जंगल में भयंकर जंगली जानवर रहते थे। चार पांच गांव वाले और उसके घर वाले ढुंढते-ढुंढते उसी पहाड़ पर पहुंचे जहां वह बकरियां चरा रहा था। उसने आवाज दी कि मैं इस पत्थर पर चिपका हुआ बैठा हूँ।

देखते ही देखते उस पत्थर से आवाज आई। 'मैं पूरणमल हूँ मेरे गुरू गोरक्षनाथ जी का धूना ऊपर है। आप सभी मेरे गुरू की पूजा पहले करो तथा बाद में

मेरी करो। मैं पूजा करने वाले हर भक्त की मनोकामना पूर्ण कर दूँगा। तथा उसके दुःखों का हरण कर लूँगा।

उस दिन के पश्चात् गांव वालों ने मिलकर उस जगह एक चबूतरा बनवा दिया। गुरू गोरक्षनाथ जी के धूने को धूनी वाला कहा जाता है। यह धूना पहाड़ की चोटी पर स्थित है। इसके नीचे पूरण भक्त का धूना है।

भक्तों के बीच बाबा चौरंगीनाथ जी का चमत्कार बढ़ता गया, भक्तों में आस्था और श्रद्धा बढ़ती गई। आज नालपुर बिस्सा में बाबा चौरंगीनाथ जी विशाल मन्दिर है। जिसका लाखों श्रद्धालु दर्शन करते हैं।

सैनिकों की रक्षा

नालपुर तथा आसपास क्षेत्र के सैनिक बताते हैं कि सिद्ध चौरंगीनाथ सदा उन्हें प्रेरित करते तथा उन्हें मुश्किलों से उबारते दिखाई देते हैं। खतरे की स्थिति में सीमा पर हर प्रकार की सहायता करते हैं। हजारों फीट बर्फीले पहाड़ों में फिसलने और गिरने से भी उनके शरीर पर खरोंच तक नहीं आती।

आज तक जितनी भी लड़ाइयां लड़ी जा चुकी है उसमें नालपुर ग्राम और आस-पास के क्षेत्रों का कोई भी सैनिक सिद्ध चौरंगीनाथ जी के आर्शीवाद से युद्ध में अकाल मृत्यु को प्राप्त नहीं हुआ है।

देश की सीमा पर कभी छुट-पुट तो कभी बड़े-बड़े युद्ध होते रहते हैं और भारी संख्या में दोनों पक्षों के जवान अपने प्राणों की आहुति दे देते हैं।

लेकिन नालपुर के देशभक्तों में से आज तक किसी के भी हताहत न होने का सारा श्रेय सिद्ध चौरंगीनाथ जी (भक्त पूरण) को जाता है।

सैनिक बताते है कि मौत उनके सहारे से होकर गुजर जाती है। बाबा की दया हम पर बनी रहती है।

सिद्ध चौरंगीनाथ जी द्वारा बाबा मस्तनाथ जी की महायात्रा के विषय में जानकारी प्राप्त करना

सिद्ध शिरोमणी श्री बाबा मस्तनाथ जी महाराज जो ज्ञान पुञ्ज, प्रेरणा पुञ्ज, योग के ज्ञाता, दिगम्बर रूपधारी, एक दिन खोखराकोट (वर्तमान अस्थल बोहर) अपने तपःस्थल पर एक कैर के वृक्ष की छाया में बैठे थे। उस समय वह ब्रह्म चिंतन में लीन थे। इतनें में ही वहां महासिद्ध योगी श्री चौरंगीनाथ जी पधारे।

महासिद्ध योगियों ने आदेश-आदेश के द्वारा एक दूसरे का अभिवादन किया और परस्पर शुभ-दर्शन लाभ कर परम आनन्दित हुए।

सिद्ध शिरोमणि श्री बाबा मस्तनाथ जी ने सिद्ध चौरंगीनाथ से उनके पधारने का कारण पूछा।

सिद्ध चौरंगीनाथ जी ने बाबा मस्तनाथ जी को स्मरण कराया और कहा - कब तक आप यहां रमण करते रहोगे। यहां आकर अपने कितने ही शिष्यों को योग मार्ग में प्रवृत्त कर दीक्षित किया है। दुःखीजनों का कष्ट हरण किया है। अब आपको यहां से चलना चाहिए। जिस कार्य के लिए आप आये थे। वह अब पूर्ण हो चुका है। आप अब यह बताइये कि आपकी महायात्रा कब होगी?

सिद्ध शिरोमणि बाबा मस्तनाथ कहने लगे - इसी वर्ष की फागुन शुक्ल नवमीं तिथि के दिन इस पूर्ण पुरुष का गमन होगा।

महासिद्धों के इस वार्तालाप को बाबा मस्तनाथ जी के शिष्य तोतानाथ जी सुन रहे थे। उन्हें सुनकर बहुत दुःख पहुंचा। वह बड़े दुःखी होकर गुरूजी से कहने लगे - गुरूदेव! काल क्या है? जो हमारे गुरूदेव का भी काल आ गया।

बाबा मस्तनाथ जी कहने लगे - मैं कालवश होकर इस संसार से नहीं जा रहा हूँ। किन्तु हे प्रिय शिष्य! मैं अपनी इच्छा से इस संसार से जा रहा हूँ। क्योंकि लोक मर्यादा की रक्षा करना भी तो मेरा कर्त्तव्य है। तुमको दुःखी होने की आवश्यकता नहीं है।

सिद्ध चौरंगीनाथ - नाथाष्टक

ॐ गुरूजी - श्री गोरखनाथ योगेन्द्र युगपति निगम अगम यश गावते

श्री शंकर शेष विरंचि शारद नारद बीन बजावते।
श्री गोरक्ष चरणां प्रणाम्यहम्।
जय श्री नाथ जी के चरणां प्रणाम्यहम्।।
जति गोरक्ष के चरणां प्रणाम्यहम्।।
ॐ गुरूजी - बालरूप जतीन्द्र जटाधर ध्यावत षट्मुख जति।
श्री रामचन्द्र वशिष्ठ हनुमत धुरू प्रहलाद रतिपति।
श्री गोरक्ष चरणां प्रणाम्यहम्।
जय श्री नाथ जी के चरणां प्रणाम्यहम्।
जति गोरक्ष के चरणां प्रणाम्यहम्।।
ॐ गुरूजी-सेली नाद सुकंठ साजत अनहद सबद प्रकाशितम्।
अजर अमर अडोल आसन सुर नरमुनि मन रंजितम्।
श्री गोरक्ष चरणां प्रणाम्यहम्
जय श्री नाथ जी के चरणां प्रणाम्यहम्।।
जति गोरक्ष चरणां प्रणाम्यहम्।।
ॐ गुरूजी - अंग भस्मी असंग निर्मल ऊनमन ध्यान सदारता।
चन्द्रभानु समानु लोचन कानकुण्डल शोभित।
श्री गोरक्ष के चरणां प्रणाम्यहम्।।
जय श्री नाथ जी के चरणां प्रणाम्यहम्।।
जति गोरक्ष के चरणां प्रणाम्यहम्।।
ॐ गुरूजी - अष्ट सिद्ध नवनाथ, भैरव वीर चौसठ जोगिनी।

चन्द्रावतार सिद्ध चौरंगीनाथ (पूरण भगत)

इन्द्र वरूण कुबेर सेविते मदनमोहन रूक्मणी।
श्री गोरक्ष चरणां प्रमाम्यहम्
जय श्री नाथ जी के चरणां प्रणाम्यहम्।
जति गोरक्ष के चरणां प्रणाम्यहम्।।
ॐ गुरूजी - उत्तर देश विचित्र गिरिवर सरसरिता अगनित बहै।
साधक सिद्ध सुजान तज मदमान निर्गुण ब्रह्म लहै।
श्री गोरक्ष चरणां प्रणाम्यहम्
जय श्री नाथ जी के चरणां प्रणाम्यहम्।
ॐ गुरूजी - सत्पुर नगर संशख रावल जाके सुत सिमरन किये
यम फांस त्रास निवारो सब दुःख सुन्दर तन अस्थिर दियो।
श्री गोरक्ष चरणां प्रणाम्यहम्
जय श्री नाथ जी के चरणां प्रणाम्यहम्।
जति गोरक्ष के चरणां प्रणाम्यहम्।।
ॐ गुरूजी - श्री प्रसुधर तप कठिन किनो सागर ततमठ बंधियों।
धुन्धूकार निवारणों हित श्री मंजुनाथ जी प्रगट भयो।
श्री गोरक्ष चरणां प्रणाम्यहम्।
जय श्री नाथ जी के चरणां प्रणाम्यहम्।
जति गोरक्ष के चरणां प्रणाम्यहम्।।
ॐ गुरूजी - श्री पतिनाथ सनाथ अष्टक पढ़त विघन नसावेहि।
बरणत पीर चौरंगी सोईनर मन वांछित फल पावेहि।
श्री गोरक्ष चरणां प्रणाम्यहम्।
जय श्री नाथ जी के चरणां प्रणाम्यहम्।
जति गोरक्ष के चरणां प्रणाम्यहम्।।

श्री चौरंगी चालीसा

दोहा– ज्ञान पारखी सिद्ध है चन्द्र चौरंगीनाथ।
जिनका वनस्पति रूप है, उन्हें नमाऊँ माथ।।
जय चौरंगी देव हमारे सारे जग के तुम रखवारे।
शालिवाहन के पुत्र प्यारे, मां इन्छरा के राजदुलारे।।
कानन तेरे कुण्डल सौहे, तिलक कान्ति मन को मोहे।
श्वेत साधु तुम चोला पहने, कुण्डी सोटा संग, माला पहने।।
सुन्दर बदन सुशील स्वभावा, गोरख शरन जोग सुख पावा।
कृपा करो हे गोरख प्यारे, सुर नर मुनि जन करते पाठ तुम्हारे।।
बारह वर्ष वन में बीते, मात-पिता वियोग में जीते।
लूणादे का लोभ न माना, दण्ड भोग ब्रह्मचर्य ठाना।।
तात वचन जल्लाद निभाया, हाथ-पांव काट कूप गिराया।
गोरक्ष योगी बाहर लाये, तबसे ही चौरंगी कहाये।।
नृप का बाग किया हरियाला, ओमशिव, ओम शिव जप त्रिकाला।
दर्शन कर मौसी पछताए, राजा मन ही मन पछताए।।
जननि इन्छरा दृग था जाला, दूर किया तिन दिया उजाला।
लूणादे को पुत्र वर दीन्हा, स्यालकोट का राज न लीन्हा।।
पूरण तुम पूरणता देते, किसी से कुछ भी नहीं लेते।
निर्धन को तुमने दीन्ही माया, अधर्मों को भी सबक सिखाया।।
सहस्रों सन्त वधे सुन्दरादे, दूर किये तिन कुटिल इरादे।
सब नर नारी तुमरी शरणा, होत आपके काहे डरना।।
तेरी दया दृष्टि आगे, यम भी नजर बचाके भागे।

चन्द्रावतार सिद्ध चौरंगीनाथ (पूरण भगत)

जती पुरूष बाबा चौरंगी, सुमिरन से बन जाते संगी।।
साधु सन्त आरती उतारें, जय चौरंगीनाथ उचारें।
दोनों हाथ जोड़ मनाऊँ, अन्तर्मन से जय कराऊँ।।
सुनीति सकल शास्त्र के ज्ञाता, तुम हो दीन दुःखी के त्राता।
जय शिव गोरक्ष तुम बलवाना, मुझ दुर्बल के घट में आना।।
चांदन चौदस रात्री जागे, भोग चूरमा खीर का लागे।
रोग गात को एक न लागे, विषय विकार कलेश सब भागे।।
सुख देते भक्तन हितकारी, काटो संकट विपद हमारी।
सीमा ऊपर तुम रखवारे सैनिकों के तुम प्राण उबारे।।
चमत्कार तुम बहुत दिखलाए, जन मन दर्शन को ललचाए।
जन बहुतेरे चावल चीन्हा, तान अन्नपूर्णा वर दे दीन्हा।
श्यामवती ने जादु चलाया, हार चरनन और शीश नवाया।
पात बेर के हैं तेजस्वी, स्वर्ण बन गया नाथ यशस्वी।।
बंजारे ने सत्य छुपाया, मधुर खाण्ड का नमक बनाया।
धेनु का तुम दुग्ध पीते, ग्वाले के दुःख के दिन बीते।।
पूनम के दिन व्रत तुम्हारा, करदो हे बाबा उजियारा।
नित्य नहा घी ज्योति जलावे, सुखमय मनोवांछितफल पावे।।
अस्थल बोहर धाम तुम्हारा, भक्तन के ही आप सहारा।
चौरंगी चालीसा जो नित गावे, कट जाये फंदा परमपद पावे।।

आरती

जय पूरण योगी, ॐ जय पूरण योगी
जो नर तुमको ध्यावत, तुमको सदा मनावत
उनकी विपदा टली, ॐ जय ----
कानों दर्शन साजे, गले सेली साजे
मस्तक तिलक विराजे, अद्‌भुत छवि सोहे
ॐ जय पूरण योगी ----
रूद्राक्षों की माला, जटा शीशधारी
अंग भभूत रमाई, बाल ब्रह्मचारी
ॐ जय पूरण योगी ----
मूंझ लंगोटा बांधे, चिमटा खप्पर धारी
चरण खड़ाऊ पहने भय भंजन हारी
ॐ जय पूरण योगी ----
थाल भरे व्यंजन के, खप्पर में लीने।
भक्त जन भोग लगावें, अमृत कर दीने।।
ॐ जय पूरण योगी ----

श्री बाबा मस्तनाथ जी एवं श्री बाबा चौरंगीनाथ मन्दिर की प्राचीनता एवं उसका आध्यात्मिक महत्त्व

गुरू गोरक्षनाथ, गोरक्षावतार बाबा मस्तनाथ एवं योगी चौरंगीनाथ जी के नाम को कौन सा ऐसा राज्य है भारत वर्ष में जो उन्हें नहीं जानता। इन योगियों की दिव्य एवं आलौकिक आभा उन महापुरूषों में है, जिन्होंने अपनी योग साधना से न केवल मठ अस्थल बोहर को बल्कि भारत को चमत्कृत किया है। इन योगियों ने लोगों के अज्ञान को दूर कर ज्ञान के पथ की ओर अग्रसर किया है।

श्री सिद्ध चौरंगीनाथ जी एवं बाबा मस्तनाथ जी ने मठ अस्थल बोहर को अपनी तपःस्थली बनाया। जिस समय यह योगी यहां पधारे थे, उस समय यह स्थान एक निर्जन वन था। चारों ओर जंगली जानवरों का साम्राज्य था। इसी स्थान पर उन्होंने अपनी अनेक योग साधनाऐं की।

हरियाणा के प्रसिद्ध धार्मिक स्थानों में सिद्ध चौरंगीनाथ एवं बाबा मस्तनाथ मन्दिर का प्रमुख स्थान है। यह सिद्ध एवं परम पावन धार्मिक स्थान सिद्ध चौरंगीनाथ

एवं बाबा मस्तनाथ जी के तप योग एवं आध्यात्मिक गरिमा से अत्यंत ही श्रद्धा-भक्ति का केन्द्र बन गया है।

जिस समय सिद्ध चौरंगीनाथ जी ने अस्थल बोहर को अपनी सिद्धियों से चमत्कृत एवं पवित्र किया, उस समय इस क्षेत्र के लोग काफी पिछड़े हुए थे। चारों ओर वन ही वन थे। इस विशिष्ट निर्जन वन को ही सिद्ध चौरंगीनाथ तथा बाबा मस्तनाथ जी ने अपनी तपस्थली बनाया। इस स्थान को उन सिद्ध ने क्यों चुना? यह तो सिर्फ वह ही जानते थे।

दिव्यात्मा, महान विभूति सिद्ध चौरंगीनाथ जी एवं सिद्ध शिरोमणि बाबा मस्तनाथ जी ने इस स्थान के पूरे वातावरण को ही आध्यात्मिक बना दिया।

पूरण भक्त (चौरंगीनाथ) योग-सम्प्रदाय में दीक्षित होकर, तपः साधना के प्रभाव से अत्यंत तेजस्वी महासिद्ध चौरंगीनाथ जी हुए। जिन्होंने 'हठयोग साधना' कर महाकाल के कालदण्ड को खंडित कर दिया और सदा के लिये अजर-अमर हो गए।

महासिद्ध चौरंगीनाथ जी की पुनीत तपःस्थली होने का सौभाग्य मठ अस्थल बोहर को प्राप्त है। यहीं पर सिद्ध चौरंगीनाथ ने 'पाद पन्थ' प्रवर्तित किया था। यही पन्थ आगे चलकर पागल पन्थ, पाव पन्थ, अथवा गलपन्थ के नाम से प्रख्यात हुआ।

पाद पन्थ के साधक भूमि पर सिर रखकर तथा आकाश की ओर पांव करके, शीर्षासन की विधि से तपस्या करते हैं। मठ अस्थल बोहर में विख्यात देवालय तालाब अब भी विद्यमान है। जिसकी मिट्टी निकालकर रोगीजन रोग मुक्त हो जाया करते थे। अब भी यही परम्परा भेरव तथा जनसाधरण में प्रचलित है। यह तालाब सिद्ध चौरंगीनाथ जी के समय से ही है।

इस मठ के योगियों की एक लम्बी परम्परा है। मठ के योगियों की आध्यात्मिक उपलब्धियाँ अलौकिक है। नाथ रोगियों के अनुसार - चौरंगीनाथ जी गोरक्षनाथ जी के शिष्य थे। राजा रिसालू के वैमात्रोय भाई थे।

माह चौदस को मठ अस्थल बोहर (रोहतक हरियाणा) में सिद्ध चौरंगीनाथ जी का बहुत भारी मेला लगता है। जिसमें सहस्रों भक्त, और योगीजन सिद्ध चौरंगीनाथ जी पूजा अर्चना करते हैं, भेंट पूजा चढ़ाते हैं तथा उन्हें आदेश नमस्कार करते हैं।

कहते हैं - माह चौदस के दिवस सिद्ध चौरंगीनाथ जी सूक्ष्म रूप में वहीं विराजित होते हैं तथा भक्तों को आशीर्वाद देते हैं।

अखंड ज्योति दर्शन - मन्दिर में परमपवित्र सात अखंड ज्योतियां सैंकड़ो वर्षों से आज तक अनवरत अनेक आंधी तूफानों के थपेड़े खाकर भी प्रज्वलित है। ये अखंड

ज्योतियां पवित्रता की प्रतीक है। इनके दर्शन कर श्रद्धालु अपने को धन्य मानते हैं।

प्राचीन धूणा – उसी समय से प्रज्वलित है जब सिद्ध चौरंगीनाथ जी ने अस्थल बोहर में अपना धूणा प्रज्वलित किया था। इस धूणे पर बैठकर साधुगण घंटो भजन कीर्तन एवं ज्ञानप्रद वार्तालाप करते हैं। इसी धूणे की विभूति भक्तों को प्रसाद के रूप में दी जाती है।

जैसा कि पहले बताया जा चुका है कि गोरक्षनाथ जी चौरंगीनाथ जी के गुरू थे, यह पुस्तक लिखते हुए मैंने अनेकों नाथ योगियों से सम्पर्क किया, तथा इस पुस्तक को लिखने में सहयोग लिया।

ज्ञान पारखी चन्द्रमा, सिद्ध चौरंगीनाथ है।
अठारह भार वनस्पति में, वो ही समाये हैं।।
ज्ञान पारखी सिद्ध हैं, चन्द्र चौरंगीनाथ।
जिनका वनस्पति रूप है, उन्हें नमाऊँ माथ।।
जय-जय-जय श्री सिद्ध चौरंगी।
योगिन के तुम नित के संगी।।
शीतल रूप चन्द्र अवतारा।
सदा करो अमृत की धारा।।
वनस्पति में अंश तुम्हारें।
औषधि से सुर भये सुखारे।।
शालिवाहन है वंश तुम्हारा।
बालपने योगी तन धारा।।

श्री बाबा मस्तनाथ मठ का भव्य दृश्य

MAXIMUM RETAIL PRICE
INCLUSIVE OF ALL TAXES
R35.00

Treasurer Offset Press, RIK.
9215651741.210498